Photo by P. R. Shinde

पुरस्कृत
परिचयोक्ति

मृत्यु का खेल !

प्रेषक :
भूपेन्द्रसिंह - शिमला

चन्दामामा

संचालक : चक्रपाणी

समय समय पर हम "चन्दामामा" में पद्य रूप में प्राचीन पुस्तकों का सार देते रहे हैं।

हम पिछले अंकों में "पंचतन्त्र" की कहानी देते रहे हैं, जिसको हमारे पाठकों ने पसन्द किया है। अब हम "गंगावतरण" प्रारम्भ कर रहे हैं।

यदि गंगा न होती तो शायद भारत का इतिहास कुछ और होता। कहने का अर्थ यह कि गंगा का भारतीय जन जीवन, भौगोलिक स्थिति व संस्कृतिक प्रगति के साथ निकट सम्बन्ध रहा है, और रहेगा। गंगावतरण भगीरथ तपस्या का परिणाम है। यह कितनी ही साहित्यिक रचनाओं के लिए प्रेरणा रही है।

हम आशा करते हैं "गंगावतरण" का भी पाठक उसी प्रकार आदर करेंगे, जिस प्रकार 'पंचतन्त्र' का किया था।

वर्ष : ११ अप्रैल १९६० अंक : ८

सातवें दिन सवेरे भीष्म ने अपनी सेना को मंडल नामक व्यूह में व्यवस्थित किया। और पाण्डव सेना वज्र नाम के व्यूह में सन्नद्ध हुई। उस दिन जो द्वन्द्व युद्ध हुआ उसमें दोनों पक्षों के महायोद्धाओं ने भाग लिया। एक दूसरे के व्यूहों को तोड़ दिया।

युद्ध के आरम्भ में ही अर्जुन ने कौरव सेना को अपने बाणों से त्रस्त कर दिया। उसने ऐन्द्रास्त्र का उपयोग किया। उसके कारण कौरव सेना के प्रति योद्धा, प्रति घोड़ा, प्रति हाथी पर कम से कम दो बाण लगे। भयभीत हो कौरव योद्धा भीष्म की शरण में भागे।

तब अर्जुन से युद्ध करने के लिए भीष्म आया। उसकी सहायता के लिए दुर्योधन ने त्रिगर्त के राजा सुशर्मा को भेजा। त्रिगर्त की सारी सेना भीष्म के साथ आई। उस महायुद्ध में विराट, अपना रथ और घोड़े खो बैठा, वह अपने लड़के शंख के रथ पर चढ़कर युद्ध करने लगा। जब शंख, द्रोण द्वारा घायल कर दिया गया तो विराट भाग निकला।

शिखण्डी और अश्वत्थामा में युद्ध हुआ। शिखण्डी ने अश्वत्थामा के माथे पर तीन बाण छोड़े। अश्वत्थामा को गुस्सा आ गया। उसने शिखण्डी के सारथी को, झंडा, घोड़े और शिखण्डी के हाथ के धनुष को नष्ट कर दिया। शिखण्डी तल्वार लेकर काफी देर तक युद्ध करता रहा। अश्वत्थामा के बाणों से अपनी रक्षा करता रहा। फिर एक रथ पर जा चढ़ा।

सात्यकी और अलम्बस नामक राक्षस में युद्ध हुआ। जब वह माया युद्ध करने

लगा तो सात्यकी ने अर्जुन से ऐन्द्रास्त्र लेकर उस पर छोड़ा और उसकी माया को खतम कर दिया।

धृष्टद्युम्न और दुर्योधन में द्वन्द्व युद्ध हुआ। दुर्योधन अपना रथ और शस्त्र खो बैठा। उसकी पराजय हुई। उसे तलवार लेकर लड़ना पड़ा। इतने में शकुनि आकर उसको अपने रथ में बिठाकर ले गया।

दुर्योधन अपमानित, पराजित हो जा रहा था कि उसके देखते देखते भीम ने कृतवर्मा के रथ को भी तोड़ दिया। और उसे अपने बाणों से बींधने लगा। कृतवर्मा वृष के रथ पर चढ़ गया। भीम कौरव सेना को तहस-नहस करने लगा।

ऐरावत ने, जो उलूपी से अर्जुन का पुत्र था, अवन्ती के राजा, बिन्दानुबिन्दों से लड़कर उनमें से एक को रथ से उतरने के लिए बाधित किया। उसके बाद दोनों एक ही रथ में चढ़कर युद्ध करने लगे। जब ऐरावत ने उसके सारथी को मार दिया तो घोड़े रथ को खींचकर अन्धाधुन्ध कहीं ले गये।

उस दिन मध्यान्ह से पहिले पाण्डव योद्धाओं ने कई बार विजय पाई। कौरव

सेना का नाश किया। इतने में घटोत्कच और भगदत्त में भिड़न्त हुई। उनमें भयंकर युद्ध हुआ। घटोत्कच पराजित हुआ और भयभीत हो भाग गया। भगदत्त पाण्डव सेना का नाश करने लगा।

शल्य और उसके भान्जे नकुल और सहदेव में युद्ध हुआ। इस युद्ध में नकुल का रथ नष्ट कर दिया गया। वह सहदेव के रथ पर चढ़कर युद्ध करने लगा। इसके बाद सहदेव ने तेज बाण से शल्य को मूर्छित कर दिया। शल्य का सारथी रथ को दूर ले गया।

थी। योद्धा अपने अपने शिविर में गये। शरीर में से बाण निकालकर उन्होंने स्नान किया। संगीत सुनकर युद्ध के बारे में बातचीत भी न की। थके मांदे वे सो गये।

अगले दिन युद्ध आरम्भ होते ही भीष्म पाण्डवों की तरफ लड़नेवाले सोमक, संजय, पांचाल सेनाओं पर बिजली की तरह टूट पड़ा।

भीष्म का उस समय मुकाबला करने के लिए भीम ने ही साहस किया। युद्ध में भीम भी उतने ही भयंकर रूप से लड़ा जितना कि भीष्म लड़ रहा था। भीष्म को वह सताने लगा। भीष्म की दुर्योधन और उसकी भाई यद्यपि सहायता कर रहे थे, तो भी भीम ने भीष्म के सारथी को मार दिया। भीष्म का रथ एक तरफ हट गया।

तुरत भीम ने बाण चढ़ाकर दुर्योधन के भाइयों में से एक सुवाभ पर छोड़ा। उसका गला कट गया। यह देख उनको गुस्सा आया। दुर्योधन के और सात भाइयों, आदित्यकेतु, बह्वाशि, कुण्डधार, महोदर, पंडितक, अपराजित, विशालाक्ष ने भीम पर आक्रमण किया। इन सब के बाण खाकर भीम को दर्द होने लगा। भीम भी गरमा

उस दिन वीरता से लड़कर अर्जुन ने सब से अधिक जन संहार किया। उसने युद्ध में न केवल सुशर्मा को ही पराजित किया परन्तु अधिक संख्या में त्रिगर्त योद्धाओं और सेना का नाश किया। इस के बाद भीष्म ने सब से अधिक संहार किया। उसने युधिष्ठिर आदि पाण्डव योद्धाओं को हराया और काफी संख्या में योद्धाओं को मार भी दिया।

सातवें दिन जब युद्ध समाप्त हुआ तो युद्ध भूमि में गीदड़ घूम रहे थे। गिद्ध मंडरा रहे थे। सारी जगह भयंकर हो रही

गया। उसने अपने बाणों से सातों को मार दिया।

अपने भाइयों को भीम के हाथ इस तरह मारा जाता देख दुर्योधन बड़ा दुखी हुआ। उसने भीष्म से कहा—"बाबा, भीम मेरे भाइयों और सेना को मार रहा है। और तुम तटस्थ से हो, यों ही देख रहे हो। देखो, हमारी क्या दुर्दशा हो रही है।"

यह सुन भीष्म को क्रोध आ गया। उसने दुर्योधन से कहा—"तुम्हें बहुत समझाया, पर तुम्हारे कान पर जूँ तक न रेंगी। मुझे और द्रोण को इस युद्ध में न उतारो मैंने कितनी बार कहा पर तुमने न सुनी। भीम, तुम्हारे भाइयों को देखकर उन्हें बिना मारे नहीं छोड़ेगा। पाण्डवों को जीतना आसान नहीं है। अगर तुम जीतना चाहो, तो तुम जीतो।"

उस दिन दुपहर को युद्ध बहुत जोर से हुआ। युधिष्ठिर की आज्ञा पर पाण्डव पक्ष के सब योद्धा भीष्म को मारने के लिए उस पर टूट पड़े। यह देख कौरव सेना ने उनका विरोध किया। घमासान युद्ध हुआ। द्रोण सृंजय, सोमक की सेनाओं को निर्मूल करने लगा। पाण्डवों की तरफ से भीम और नकुल सहदेव, हाथियों की सेना से आश्विकों का नाश करने लगे।

और इधर, एरावत ने अपने योद्धाओं को, सेनाओं को एकत्रित करके कौरव सेनाओं का विनाश आरम्भ कर दिया था।

तब शंख के भाई, गज, गवाक्ष, वृषभ, चर्मवन्त, अर्जव, शक आदि छः योद्धा, एरावत से जमकर युद्ध करने लगे। एरावत ने सब से युद्ध करते हुए असाधारण वीरता दिखाई। वह अपने शरीर पर लगे बाणों को निकालकर उन्हें शत्रुओं पर

रहा था? उसी भीम के भाई का लड़का, जिसने तुम्हारे बकासुर को मारा था। तुम तो बहुत-सी माया और मायास्त्र जानते हो। इसलिए इस युवक को जैसे भी हो मार दो।"

उस राक्षस का एरावत से बहुत देर तक युद्ध होता रहा। एरावत लड़ते-लड़ते मूर्छित हो गया। उस हालत में राक्षस ने अपनी तल्वार से उसे मार दिया।

एरावत की मृत्यु के बारे में अर्जुन को तुरत न मालूम हो सका। वह एक और स्थल पर कौरव सेना का विनाश करने लगा। परन्तु यह बात घटोत्कच को मालूम हुई तो वह इस तरह गरजा कि भूमि और आकाश गूँज उठे। और वह कौरव सेना पर आक्रमण करने लगा। उसके साथ राक्षस सेना आई। घटोत्कच और उसकी राक्षस सेना मृत्यु-सेना सी लगती थी। दुर्योधन ने पराक्रमपूर्वक उसका मुकाबला किया। वंग राजा उसकी सहायता कर रहा था।

दुर्योधन ने अपने बाणों से कई राक्षस योद्धाओं को मार दिया। यह देख घटोत्कच खौल उठा। वह एक शक्ति लेकर दुर्योधन

छोड़ने लगा। उसके बाणों की चोट से सब विरोधी मूर्छित हो गये। यह देख एरावत, तल्वार निकालकर उनको मारने के लिए पैदल ही निकल पड़ा। इतने में उनकी मूर्छा जाती रही और वे उसका मुकाबला करने की कोशिश करने लगे। किन्तु उसने अपनी तल्वार से उनको दूर ही न रखा, परन्तु वह उनको मारने भी लगा। सब उसकी तल्वार के शिकार हुए। केवल वृषभ ही बचकर निकल सका।

यह देख दुर्योधन ने आर्घ्य शृंग नामक राक्षस से कहा—"जानते हो कौन लड़

को मारने के लिए लपका। तब बंग राजा ने अपने हाथी को दुर्योधन के रथ के सामने चलाया। घटोत्कच की शक्ति से हाथी मर गया। बंग राजा जान बचाकर भाग निकला। घटोत्कच के गर्जन के कारण सेनायें कांप-सी उठीं।

"घटोत्कच दुर्योधन को पकड़कर मारने की सोच रहा है। जाओ उसकी रक्षा करो।" द्रोण से किसी ने कहा। द्रोण, सोमदत्त, बाह्लिक, सैन्धव, कृप, भूरिश्रव, शल्य, बृहद्बल, अश्वत्थामा, विकर्ण, चित्रसेन, विविंशति आदि महायोद्धा घटोत्कच से लड़ने गये। राक्षसों से उनका भीषण युद्ध हुआ। घटोत्कच उन सब योद्धाओं को सताने लगा। उन पर हर तरह से प्रहार करने लगा।

इतने में घटोत्कच की मदद के लिए भीम और भीम को देखकर अभिमन्यु आदि योद्धा आये। कौरव सेना उनसे लड़ने लगी। भयंकर युद्ध हुआ। इस युद्ध में ऐसा समय भी आया, जब कौरव सेना ने भीम को घेर कर मारना चाहा। यह देख घटोत्कच ने भयंकर रूप दिखाये। उसको देखकर अश्वत्थामा जैसे वीर भी डर गये।

बाकी कौरव सेना मैदान छोड़कर भाग निकली। घटोत्कच ने सिंह गर्जन किया।

तब भीष्म ने भगदत्त से कहा—"राजा, घटोत्कच का तुम्हें मुकाबला करना होगा। तुम्हारे पास कितने ही बड़े-बड़े अस्त्र हैं। तुमने कितने ही राक्षसों से युद्ध किया है।" भगदत्त, अपने सुप्रतीक नामक बड़े हाथी पर चढ़कर युद्ध करने के लिए आया।

भगदत्त अपने हाथी को भीम के रथ पर ले गया। दशार्ण देश के राजा, क्षत्रियदेव ने, जो एक अच्छे हाथी पर सवार था,

भगदत्त का विरोध किया। पर उसका हाथी भगदत्त के प्रहार न सह सका और भाग गया। उसके बाद सुप्रतीक पाण्डव सेना का नाश करने लगा।

तब घटोत्कच ने भगदत्त का मुकाबला किया। घटोत्कच ने उसके हाथी पर जो भाला फेंका उसके लगने से पहिले भगदत्त ने उसके दो टुकड़े कर दिये। और जब भगदत्त ने एक बड़ी शक्ति घटोत्कच पर छोड़ी तो उसने उसको बीच में ही अपने हाथों से पकड़ लिया और उसे वापिस फेंका। यह देख भगदत्त हैरान रह गया।

पाण्डव सेना की हर्षध्वनि सुनकर भगदत्त को रोष आ गया। और वह भयंकर युद्ध करने लगा। पाण्डव पक्ष के सभी योद्धाओं पर उसके बाण लगे। जब भीम का सारथी विशोक मूर्छित हो गया, तो वह गदा लेकर निकला। इतने में अर्जुन भी भगदत्त से युद्ध करने के लिए आया। तब ही उसे, कृष्ण और भीम को एरावत की मृत्यु की बात पता लगी।

अर्जुन को फिर राज्य की आकांक्षा तुच्छ लगने लगी। उसने सोचा—"यह भी कैसा युद्ध है, जिसमें दोनों तरफ के योद्धा अपने सम्बन्धियों को मार रहे हैं।" परन्तु उस युद्ध में सिवाय जी-जान से युद्ध करने की अपेक्षा और कोई मार्ग न था, यह वह जानता था।

इतने में भीम को धृतराष्ट्र के कुछ और पुत्र दिखाई दिये। वह उन पर इस तरह टूट पड़ा, जिस तरह शेर हरिणों पर टूट पड़ता है। जब उसने कुछ को मार दिया, तो और मैदान छोड़कर भाग गये। उस दिन युद्ध तब तक अन्धेरे में भी चलता रहा जब तक एक दूसरे को कुछ न दिखाई देता था। तब जाकर युद्ध समाप्त हुआ।

[२]

[विचित्र महल में से आये हुए मन्त्री और सेनापति, चित्रसेन को उस महल में ले गये। महल में वे सब सुविधायें थीं जो राजमहलों में प्रायः होती हैं। अगले दिन चित्रसेन का पिता तारकेश्वर आया। उसने अपने लड़के को आश्वासन दिया कि अगर आवश्यकता हुई तो वह उसकी मदद ले सकता है। फिर वह चला गया। उसके बाद...]

अगले दिन सवेरे चित्रसेन जब पिता को भेजकर मन्त्रियों के साथ महल में आया तो वहाँ बहुत-से लोग इकट्ठे हुए दिखाई दिये। चित्रसेन को पास आता देखकर वे ज़ोर से चिल्लाये—"महाराज, हमारी रक्षा कीजिये। इस जंगल में रहनेवाला उमाक्ष और उसके सेवक पहिले हमारे पशुओं को ही उठाकर ले जाते थे अब उन्होंने आदमियों को भी उठाकर ले जाना शुरु कर दिया है। आप ही हमारे रक्षक हैं।" वे रोये-धोये।

उमाक्ष का नाम सुनते ही चित्रसेन काँपने लगा। पर इतने में जाने कहाँ से उसे रोष आ गया। अब वह असहाय न था। वह राजा था। उसके पास राज्य, राजकर्मचारी, सेना सभी कुछ था। अगर उसके राज्य में कोई प्रजा को सताता है तो उसको मारने की जिम्मेवारी उस पर थी। अगर उमाक्ष

ही यह हो, तो उसके तटस्थ रहने की आवश्यकता न थी।

"तुम्हें कैसे मालूम हुआ कि उम्राक्ष ही तुम्हारे पशुओं और आदमियों को उठाकर ले जा रहा है?" चित्रसेन ने पूछा

यह प्रश्न सुनते ही वहाँ एकत्रित लोगों में तहलका मचने लगा। थोड़ी देर में जनता के दो नेताओं ने आगे बढ़कर कहा—"महाराज, ऐसे बहुत-से लोग हैं, जिन्होंने अपनी आँखों से उम्राक्ष और उसके सेवकों को पशुओं को ले जाते देखा है। पर कोई ऐसा नहीं है जिसने उनको मनुष्यों को ले जाते देखा हो। सिवाय नर-भक्षक राक्षसों के कोई और क्यों मनुष्यों को उठाकर ले जायेगा!"

उनका यह उत्तर सुनकर चित्रसेन को कुछ आश्चर्य हुआ। अगर पशुओं को उठाकर ले जानेवाले उम्राक्ष और उसके सैनिक हैं तो मनुष्यों को ले जानेवाले वह और उसके आदमी न होंगे—चित्रसेन ने सोचा।

"अच्छा, तो आप अपने-अपने गाँव जाओ। एक दो दिन में उस उम्राक्ष और उसके आदमियों के उत्पात को खतम करना मेरा काम रहा।" यों चित्रसेन ने उनको आश्वासन दिया।

चित्रसेन के इस प्रकार कहते ही मन्त्री ने उसके पास आकर धीमे से कहा—"महाराज, उम्राक्ष के बारे में मैंने दूतों से सुना है। वह बहुत भयंकर है।"

चित्रसेन ने महल में जाने के लिए सीढ़ियों पर से जाते हुए कहा—"वह भयंकर हो सकता है। अगर वह लोगों को मार रहा हो, उत्पात मचा रहा हो, उस हालत में हमारा तटस्थ रहना राजधर्म तो नहीं है न! सेनापति कहाँ है?"

यह प्रश्न सुनते ही पीछे आते हुए सेनापति ने आगे बढ़कर कहा—"महाराज।"

"हमारे सैनिक कहाँ हैं? वे सुशिक्षित और साहसी हैं न?" चित्रसेन ने पूछा।

सेनापति ने कुछ आश्चर्य प्रकट करते हुए कहा—"उनके शिक्षण, धैर्य, साहस के बारे में तो कहना ही क्या? महाराज, अगर आप कहें तो वे पहाड़ों को चूर चूर कर सकते हैं।"

"पहाड़ों को चूर करना तो हर ताकतवर मजदूर जानता है। मैं वह नहीं पूछ रहा हूँ। अगर ज़रूरत हुई तो क्या हमारे सैनिक उग्राक्ष का मुकाबला कर सकते हैं? क्या उनमें इतनी हिम्मत है? मैं यह जानना चाहता हूँ।" चित्रसेन ने कहा।

सेनापति काँप-सा गया। फिर उसने कंपती हुई आवाज में कहा—"महाराज! वह राक्षस।" वह कुछ कहने जा रहा था कि चित्रसेन उसकी घबराहट देखकर हँसा। "सेनापति! जब तुम ही उस राक्षस का नाम लेते ही इस तरह काँप रहे हो, फिर सैनिक कितना डर रहे होंगे, यह कहने की जरूरत ही नहीं है। तो भी उनके रहने की जगह कहाँ है?" उसने पूछा।

सेनापति ने आगे आगे पश्चिम की ओर के बुर्ज की ओर रास्ता किया। चित्रसेन के बुर्ज पर पहुँचते ही सेनापति ने कुछ दूरी पर छोटे छोटे पहाड़ों और पेड़ों की ओर दिखाते हुए कहा—"महाराज! वहाँ शिविर बनाने के लिए हमारे सैनिक पहाड़ों को सपाट कर रहे हैं।"

चित्रसेन को कई हज़ार आदमी दिखाई दिये। उनमें से हर कोई, कोई न कोई उपकरण लेकर पहाड़ी प्रदेश खोदकर उसे समान कर रहा था। उनको देखकर चित्रसेन को गर्व हुआ कि उसके पास

धन-सम्पत्ति ही न थी, बड़ी सेना भी थी। उसने मन ही मन उस सिद्ध पुरुष को कृतज्ञतापूर्वक याद किया, जिसने उसका इतना उपकार किया था।

"महाराज! उस राक्षस पर हमला करने से पहिले हमें आगे पीछा सोचना होगा।" मन्त्री ने कहा।

"मेरा इरादा अपनी सेना को उन राक्षसों पर हमला करने के लिए भेजने का नहीं है। मैं स्वयं उग्राक्ष से बात करके देखूँगा।" कहते हुए उसने सेनापति की ओर मुड़कर पूछा—"क्या तुम उसकी जगह जानते हो?"

"मैंने अपने गुप्तचरों से राक्षस के किले के बारे में जान लिया है। महाराज, मगर आपको...." कहता कहता सेनापति पसीना पसीना हो गया।

"मैं अकेला उसके किले में नहीं जाना चाहता। मेरे साथ कुछ सैनिक होंगे। अगर आना चाहो तो तुम भी आ सकते हो।" चित्रसेन ने कहा।

"महाराज! मैं ही नहीं, हमारे प्रति सैनिक आपके लिए अपने प्राण न्योछावर करने को तैयार है।" सेनापति ने कहा।

इसके कुछ देर बाद चित्रसेन कुछ सैनिकों और सेनापति को लेकर उग्राक्ष के निवासस्थान की ओर निकला। कुछ गुप्तचर, जो राक्षस के निवास से परिचित थे, आगे आगे रास्ता दिखा रहे थे। ठीक दुपहर के समय जंगल में बहुत दूर जाने के बाद उस नाले के पास पहुँचे, जहाँ उग्राक्ष रहा करता था।

पहाड़ के नीचेवाले जंगल में कुछ राक्षसों ने चित्रसेन और उसके आदमियों को देखकर अट्टहास किया—"अहा, ये लोग भी कितने बुद्धिमान हैं, ये हमारे लिए और हमारे मालिक के लिए, आहार बनाने के लिए स्वयं इस तरह चले आ रहे हैं, जैसे इसी काम पर आ रहे हों।"

"तुम अपने नेता से कहो कि मैं आ रहा हूँ। मेरा नाम चित्रसेन है।" चित्रसेन ने उन राक्षसों से कहा।

यह सुनते ही राक्षस और जोर से हँसे। "नर मांस का स्वाद सब का एक जैसा ही है। तुम्हारा मांस क्या कोई अधिक स्वादिष्ट है? तुम्हारे कपड़े वगैरह तो बहुत कीमती मालूम होते हैं। कहीं

कहकर चित्रसेन और उसके आदमियों के आगे आगे चलकर उग्राक्ष के किले की ओर रास्ता दिखाने लगे।

उग्राक्ष का किला बहुत विचित्र था। उसने जंगल में ही एक पहाड़ में कमरे, द्वार, बुर्ज आदि खुदवा रखे थे। किले के चारों ओर का परकोटा, उसमें चारों दिशाओं में बुर्ज, उसका मुख्यद्वार सब एक ही पत्थर में थे। युद्ध करके राक्षस का किला ले लेना किसी मनुष्य के लिए सम्भव न था। किसी और राक्षस के लिए भी उस पर आक्रमण करना बहुत कठिन था।

चित्रसेन उस आश्चर्यजनक किले को देखता ज्योंही मुख्य द्वार को पार करके अन्दर गया तो उसको उग्राक्ष का अट्टहास सुनाई दिया। वह अपने घर के सामने एक ऊँची पत्थर की वेदी पर बैठा था।

"हे चित्रसेन! वह तुम्हारा बड़ा लड़का कहाँ है, जिसके बारे में तुमने प्रतिज्ञा की थी?" पूछकर उग्राक्ष ने सबको गौर से देखा।

"उग्राक्ष! क्या तुम पागल हो गये हो? कल नहीं, परसों ही तो मैंने तुम्हें वचन दिया था। फिर इसी बीच तुम यह कैसे सोच बैठे कि अट्ठारह साल बीत गये हैं!"

तुम राजा तो नहीं हो? फौरन बताओ।" उन्होंने पूछा।

"हाँ, राजा हूँ। महाराज चित्रसेन। क्या तुम उस महल को जानते हो जो यहाँ से पाँच दस योजन दूर जंगल में है?" चित्रसेन ने गुस्से में पूछा।

उस महल का नाम सुनते ही राक्षस जरा घबराये—"प्रभु! माफ़ कीजिये। हमारे सरदार ने आपके बारे में बताया था। सुना है आगे हमारे बड़े सरदार को आप ही भेजेंगे? आइये, आइये। हमारा सरदार किले में ही है।" वे यों

चित्रसेन की बात सुनकर उग्राक्ष और जोर से हँसा। "राक्षस की जब बुद्धि ठीक रहती है तभी उसको पागल बताया जाय तो अगर उसको पागलपन हो जाये तो समझ लो कि मानव जाति ही नष्ट हो जायेगी।" उग्राक्ष ने कहा।

"मैं मानव जाति के बारे में तो नहीं जानता। खासकर मेरे राज्य में लोग मर रहे हैं।" चित्रसेन ने कहा।

"तुम्हारा राज्य!" पूछते हुए उग्राक्ष को आश्चर्य हुआ, फिर मुस्कराते हुए उसने कहा—"हाँ, उग्राक्ष का सारा जंगल तुम्हारा ही तो है। नर्मदा नदी के किनारे के धवलगिरि राज्य की ओर के सिवाय बाकी सब दिशाओं में जहाँ तक देखो वहाँ तक उग्राक्ष का ही तो जंगल है। सौ योजन तक।"

"इस जंगल के गाँवों में रहनेवाले लोगों को तुम्हारे सेवक नष्ट कर रहे हैं। उनके पशुओं का उठा ले जा रहे हैं। यह सब तुम अपने वचन के विरुद्ध कर रहे हो। तुमने वचन दिया था न कि मुझे आराम से इस प्रदेश में राज्य करने दोगे!" चित्रसेन ने कहा।

चित्रसेन की बात सुनते ही उग्राक्ष हैरान रह गया। वह कुछ कहता कहता रुका। अपने सामने पत्थरों को दिखाते हुए उसने कहा—"सब उन पत्थरों पर आराम से बैठो। चित्रसेन की ओर देखते हुए उसने कहा—"चित्रसेन! तुम्हारा ख्याल गलत है। इसी जंगल में जो आदमियों को उठाकर ले जा रहे हैं, उसके लिए मेरे आदमी जिम्मेवार नहीं है।"

"क्या तुम मुझे यह विश्वास दिला रहे हो कि तुम या तुम्हारे आदमी मेरी प्रजा

को तंग नहीं कर रहे हैं, क्यों उग्राक्ष?" चित्रसेन ने गुस्से में पूछा।

"मैं यह नहीं कहता कि मेरे आदमी तुम्हारे लोगों को तंग नहीं कर रहे हैं। किसी त्यौहार आदि पर एक दो को मारकर खा जाते होंगे। परन्तु ग्रामों पर आक्रमण करके आदमियों को उठा ले जानेवाले कोई और हैं।" कहता कहता, उग्राक्ष फिर रुका। चित्रसेन की ओर देखते हुए, कुछ सोचते हुए उसने पूछा—"चित्रसेन, कभी तुमने अग्निद्वीप का नाम सुना है?"

"अग्निद्वीप! कोई ऐसा भी द्वीप होगा, यह मैं नहीं जानता था।" चित्रसेन ने आश्चर्यपूर्वक कहा।

"अच्छा, अगर आज रात को तुम और तुम्हारे सेवक यहाँ रहे तो मैं उन क्रूर लोगों को दिखाऊँगा, जो अग्निद्वीप से आते जाते रहते हैं। वे ताकत में हमारे राक्षसों के सामने नहीं टिक सकते। परन्तु जिन भयंकर आश्चर्यजनक पशुओं पर चढ़कर वे आते हैं, उनका कोई मुकाबला नहीं कर सकता। क्योंकि उनके पंख हैं और आकाश में उड़ते हैं, इसलिए उनको पक्षी कहना ही ठीक होगा। उस विचित्र पक्षी पर सवार होकर अग्निद्वीप से आये हुए एक ही व्यक्ति को हम अब तक पकड़ पाये हैं। पर न मालूम क्यों वह अगले दिन ही मर गया। अगर तुम उसका अस्थिपंजर देखना चाहो तो मेरे साथ आओ।" उग्राक्ष ने कहा।

"अस्थिपंजर नहीं, अगर तुम ठीक कह रहे हो तो मैं उन दुष्टों को जीता जी देखना चाहता हूँ और उनके भयंकर पक्षियों को भी देखने की मर्जी हो रही है।" चित्रसेन ने कहा। उग्राक्ष ने भी सिर हिलाकर बताया कि वह इसके लिए तैयार था। (अभी है)

वह पछताया भी नहीं

विक्रमार्क फिर पेड़ के पास गया। शव उतारकर कन्धे पर डाल चुपचाप श्मशान की ओर चलने लगा। तब शव में स्थित बेताल ने कहा—"यह काम अपने कन्धों पर लेकर कम से कम अब तो पछता रहे होगे! तुम काश्मीरवर्मा की तरह पश्चताप न करनेवाले शायद न होगे। ताकि तुम्हें थकान न मालूम हो इसलिए काश्मीरवर्मा की कहानी सुनाता हूँ। सुनो।" उसने यों कहानी शुरु की।

किसी समय कपिल देश के पुरुषपुर में काश्मीरवर्मा नाम का एक युवक रहा करता था। वह अच्छा पढ़ा लिखा था। परन्तु बिल्कुल गरीब। पंडितों का सम्मान करके उनका पोषण करनेवाला कोई न था। इसलिए उसकी हालत यह हो गई कि

बेताल कथाएँ

वह चोर, पियक्कड, जुआखोरों के साथ चोरी करके जीवन निर्वाह करने लगा। काश्मीरवर्मा उस को इस प्रकार जिन्दगी बसर करना स्वाभाविक ही लगा। परन्तु जो उसे पंडित के रूप में जानते थे, उनको यह पसन्द न था। किन्तु काश्मीरवर्मा को इसकी चिन्ता न थी।

सरदियों के दिन थे। श्मशान के समीप एक झोंपड़े में कुछ चोर जमा हुए। खूब शराब पी उन्होंने। जुआ खेला। वे घर भी न जा सकते थे क्योंकि बाहर पाला पड़ रहा था। काश्मीरवर्मा भी वहीं रहा। जुआ खेलनेवालों में से दो में झगड़ा हुआ। जब एक ने दूसरे को हमेशा जीतता देखा तो उसे गुस्सा आ गया। जीतनेवाला ज़ोर से हँसा। गुस्से में दूसरे ने छुरी निकालकर उसके पेट में भोंक दी तो वह मर गया। जब हत्या हो गई तो चोरों ने पाले की भी परवाह न की और वे अपने अपने घर भाग गये। आखिर झोंपड़े में काश्मीरवर्मा और शव ही रह गये।

"यह हत्या यूँही न जायेगी। इसके लिए किसी न किसी को फाँसी पर चढ़ना होगा। अगर मैं यहाँ रहा तो मुझे ही फाँसी पर चढ़ाया जा सकता है। यहाँ रहना ठीक नहीं है।" यह सोचकर काश्मीरवर्मा नगर की ओर चल पड़ा। परन्तु कोई ऐसा घर न था जहाँ वह जा सकता था। नगर में सवेरे तक किसी पुराने दोस्त के यहाँ रहूँगा। कोई न कोई तो सोने के लिए थोड़ी-सी जगह देगा। उसका यह ख्याल था। उस ठंड में, पाले में वह नगर की गलियों में चलता जाता था। अगर कभी पहरेवाले दिखाई देते तो एक तरफ हट जाता। पास के बराण्डे में छुप-छुपा जाता।

काश्मीर वर्मा ने एक अपने पुराने दोस्त के घर जाकर किवाड़ खटखटाया। थोड़ी देर बाद अन्दर से आवाज आई—"कौन है?"

"मैं काश्मीरवर्मा हूँ। जरा दरवाजा खोलो। सवेरे तक सोकर मैं उठकर चला जाऊँगा।" काश्मीरवर्मा ने कहा। अन्दर से कोई जवाब न आया।

काश्मीरवर्मा शहर के एक और कोने में एक और मित्र के यहाँ गया। वहाँ भी उसका नाम सुनते ही उन्होंने भी किवाड़ न खोले।

"मनुष्य भी कितने नीच हैं। इतने बड़े बड़े घर हैं। क्या इन्हें मरते समय साथ ले जायेंगे? मरते को भी मुट्ठी भर खाना नहीं देते हैं। जाड़े में मरनेवाले को जगह नहीं देते।" काश्मीरवर्मा सोच रहा था। सरदी तो थी ही। अब वह थकान और भूख से भी तंग था।

उसको लगा कि यदि उसने थोड़ा-बहुत खा न लिया और किसी गरम जगह पर न सो गया तो सवेरे तक वह मर जायेगा। इस जाड़े में बेघरबार बच्चों को उसने गलियों में मरते देखा ही था। वह उस तरह की मौत न चाहता था। कोई भी सीधी तरह उसको रहने की जगह देता नहीं। इसलिए उसने किसी घर में चोर के रूप में घुसना चाहा। रसोई में जाकर कुछ खा-पीकर कुछ देर सोने का उसने निश्चय किया। उसको एक घर सामने ही दिखाई दिया। उसमें घुसना उसे बहुत मुश्किल न लगा। घर किसी अमीर का ही था। रसोई में बहुत-सा खाना बचा हुआ होगा। जाते समय चार चान्दी के बर्तन भी मिल जायेंगे—उसने सोचा।

वह गली में घूम-घामकर देख रहा था कि उसे मालूम हुआ कि अन्दर कहीं रोशनी हो रही थी।

"ये क्यों जागे हुए हैं।" अन्दर लोग जागे हुए थे इसलिए उसने चोर की तरह नहीं घुसना चाहा। उसने भद्रपुरुष की तरह ही अन्दर जाना चाहा। उसने गली में जाकर किवाड़ खटखटाये। घर के मालिक ने आकर किवाड़ खोला। वह अधेड़-सा था। परन्तु आदमी में एक प्रकार का रौब था। "क्यों अब किवाड़ खटखटा रहे हो?" उसने पूछा।

"सरदी और भूख के मारे मरा जा रहा हूँ।" काश्मीरवर्मा ने कहा।

"अन्दर आइये।" घर का मालिक उसको रसोई में ले गया। घर में सिवाय उसके और कोई न था। इसलिए उसने स्वयं उसको भोजन परोसा। भोजनकक्ष की अलमारियों में सोने के लोटे और चान्दी के थाल रखे हुए थे। उसमें से यदि उसने एक भी यदि ले लिया तो उसकी गरीबी जा सकती थी।

काश्मीरवर्मा जब भोजन कर रहा था तो घर के मालिक ने पूछा—
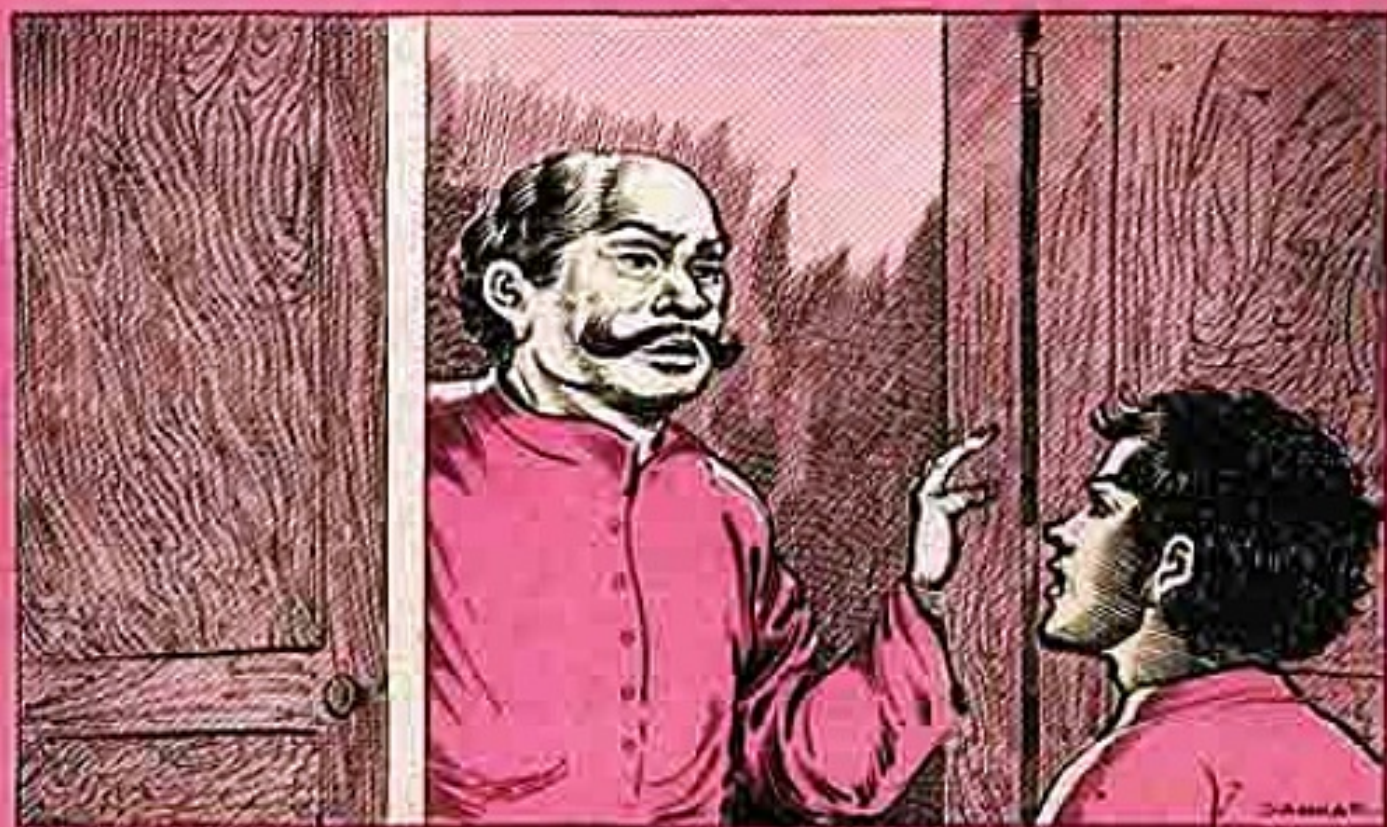
"बाबू, तुम्हारे कपड़ों पर खून के दाग हैं।"

"यह मैंने नहीं किया। चोरों में झगड़ा हुआ और एक की हत्या की गई। शव के बारे में सोचते ही मैं काँप जाता हूँ।" काश्मीर वर्मा ने कहा।

"मैंने बहुत से शवों को देखा है। कई युद्धों में लड़ा हूँ। मेरा नाम जगवीर वर्मा है। शायद तुमने मेरा नाम सुना ही होगा।" घर के मालिक ने कहा। फिर जगवीर वर्मा ने काश्मीरवर्मा के नाम, पता ठिकाने के बारे में पूछा।

"मेरा नाम काश्मीर वर्मा है। मैंने व्याकरण, तर्क आदि पढ़ा है। और अब चोरी करके जिन्दगी बसर करता हूँ।" काश्मीरवर्मा ने कहा।

"पढ़े-लिखे हो और चोरी करते हो?" जगवीर वर्मा ने पूछा।

"इसमें गलती क्या है, क्या आप योद्धाओं को मारते लूटते नहीं हैं!" काश्मीरवर्मा ने पूछा।

"परन्तु योद्धाओं और चोरों में समानता ही क्या है! योद्धा प्राणों को हथेली पर रखकर लड़ता है। प्रतिष्ठा के लिए प्राण

दे देता है। चोर अपने स्वार्थ के लिए चोरी करता है।" जगबीर वर्मा ने कहा।

"चोरों को भी जान का खतरा होता है। यही नहीं, वे योद्धा की तरह प्रतिपक्षी को मार भी नहीं पाते हैं कि इससे पहिले वे फांसी पर चढ़ा दिये जाते हैं।" काश्मीरवर्मा ने कहा।

"परन्तु सैनिक प्रजा की रक्षा करते हैं और चोर प्रजा की हानि करते हैं।" जगबीर वर्मा ने कहा।

"यह एक सन्देह मात्र है। किसी किसान से पूछिये कि वह सैनिकों से अधिक डरता है या चोरों से, तो आपको सचाई मालूम हो जायेगी। चोर, सैनिकों की तरह मान का अपहरण नहीं करता।" काश्मीर वर्मा ने कहा।

"मुझे देखो, सेना में रहकर मैंने कितना धन व कीर्ति पाई है। सब मेरा आदर करते हैं। तुम अपने को देखो। भिखारी हो। घरबार भी नहीं है। खाने तक को नहीं है। आदर भी नहीं पाते। तुम्हारी हालत तो उस लोमड़ी की सी है। जिसके पीछे शिकारी लगे हुए हों।" जगबीर वर्मा ने कहा।

काश्मीरवर्मा ने भोजन पूरा करके कहा—"हुजूर, आप और मुझ में जो भेद है, वह पैसे का है। अगर आपका पैसा मेरे पास होता तो मैं भी महायोद्धा हो जाता। अगर आप भी कंगाल होते, तो आप भी चोरी करते, यह न सोचिये कि चोरों में आदमियत नहीं होती है। आपने मुझे घर में बुलाकर भोजन दिया, इसके लिए मैं बहुत कृतज्ञ हूँ। अगर मैं चोरी ही करना चाहूँ तो आपका गला घोंटकर यह सब सोना आसानी से ले जा सकता हूँ। आप बूढ़े हो गये हैं। अकेले हैं। मैं अभी जवान हूँ, बलवान हूँ। फिर भी मैं आपका कुछ न बिगाड़ूँगा।"

यह सुन जगवीर वर्मा गरमा पड़ा। बड़े जोर से चिल्लाया—"नीच कहीं का तुम आदमी आदमी में फर्क भी नहीं पहिचानते! तुम्हारी पंडिताई किस काम की है! तुझे अन्दर आने दिया, यही मैंने गल्ती की। खाना खाया सो खाया, अब तुम इस घर में एक क्षण नहीं रह सकते। जाओ।"

तभी पूर्व में प्रातःकाल के लक्षण दिखाई देने लगे थे। काश्मीरवर्मा ने खड़े होकर

कहा—"हो सकता है कि आपको कीर्ति मिली हो, पर आपकी मति चली गई है।" और वह बाहर चला गया।

बेताल ने, यह कहानी सुनाकर पूछा—"राजा, काश्मीर वर्मा पेशे से चोर है। उसके दोस्त, चोर और जुआ-खोर हैं। सिर ढाँपने के लिए उसके पास घर तक नहीं है। कोई अपना नहीं है। भूख लगने पर खाना देनेवाला भी कोई नहीं। तब भी उसमें इतना अभिमान क्यों है! अच्छा मौका मिलने पर भी वह क्यों न पश्चात्ताप करता! क्यों नहीं उन लोगों का आदर करता, जिनकी प्रतिष्ठा, पद, उससे कई गुना बड़े हैं! अगर तुमने जान-बूझकर इन प्रश्नों का उत्तर न दिया, तो तुम्हारा सिर फूट जायेगा।"

"जो मरना न चाहे उसके लिए जीने के सिवाय कोई अच्छा रास्ता नहीं है। जीने के लिए वह जो कर सकता था, वह काश्मीरवर्मा ने किया। इसलिए वह शर्मिन्दा नहीं हुआ। वही तो पश्चताप करता है, जो अच्छी तरह जिन्दगी बसर कर सकता है, मगर बसर नहीं करता है। यह सच है कि उसको जगवीर वर्मा के प्रति कोई आदर न था। इसका कारण यह था कि काश्मीरवर्मा को युद्ध करनेवालों के प्रति कोई गौरव न था। जितनी नफरत जगवीर वर्मा को चोरों से थी, उतनी ही काश्मीर वर्मा को सैनिकों से थी। इसलिए काश्मीर वर्मा ने जगवीर वर्मा के प्रति कृतज्ञता तो दिखाई पर वह सम्मान न दिखा पाया।" विक्रमार्क ने कहा।

राजा का इस प्रकार मौन भंग होते ही बेताल शव के साथ अदृश्य हो गया और पेड़ पर जा बैठ गया।

(कल्पित)

यौगन्धराय की प्रतिज्ञा

वत्स देश के राजा उदयन को हाथियों का शिकार करने का शौक था। वह हाथियों का शिकार करने विन्ध्या पर्वतों में गया। उसी समय उसके मन्त्री, यौगन्धराय को कुछ गुप्तचरों ने आकर खबर दी कि नागवन में प्रद्योत महासेन ने एक विचित्र आकार के मायापूर्ण नील रंग के हाथी को छुपा रखा था। उसमें कुछ सैनिक थे। वत्स राजा को पकड़ने के लिए ही प्रद्योत यह चाल चल रहा था। उस हाथी के साथ कुछ असली हाथी भी थे।

यह पता लगते ही यौगन्धराय ने राजा को सावधान करने के लिए सालक नामक व्यक्ति को भेजते हुए कहा—"कल राजा बाँसों के जंगल से नागवन की ओर जा रहे हैं। उनके रवाना होने से पहिले तुम्हें यह खबर उनके पास पहुँचानी होगी। प्रद्योत के पास होने को तो बहुत बड़ी सेना है, परन्तु उनमें एकता नहीं है, इसलिए वे हमसे युद्ध नहीं कर सकते। यही बात है कि वह इस तरह की चाल चल रहा है। तुम्हें बहुत दूर जाना है। जल्दी-जल्दी जाओ।" उसने राजा के नाम एक चिट्ठी भी भेजी।

इतने में पता लगा कि उदयन महाराजा के यहाँ से उनका संरक्षक हँसक आया हुआ है। यौगन्धराय को उससे मालूम हुआ कि पिछले दिन ही राजा नागवन में गया था। और वहाँ शत्रुओं द्वारा पकड़ लिया गया था। उदयन अरुणोदय के पहिले ही बाँसों के जंगल से केवल छाता पकड़नेवाले और कुछ शिकारियों को लेकर ऐसी पगडंडी पर निकल पड़ा था, जिस पर केवल जंगली जानवर ही आते जाते थे।

राम मोहन

कुवलयय को देखा था। इसलिए उसने उसको एक सोने की माला ईनाम में दे दी। उसने अपने आदमियों को वहाँ रहने के लिए कहा और स्वयं हाथी को पकड़ने के लिए वीणा लेकर चल पड़ा। वीणा के संगीत से सम्मोहित करके हाथियों को पकड़ने की उसकी पुरानी आदत थी। मन्त्रियों ने राजा से बहुत कहा कि वह अकेला न जाये। पर उसने सुना ही नहीं।

वह एक घोड़े पर सवार हो बीस आदमियों को साथ ले चार मील चलकर दुपहर को उस जगह पहुँचा जहाँ वह "हाथी" था। तुरत प्रद्योत के आदमियों ने राजा और उसके साथियों को घेर लिया। वे यद्यपि अधिक संख्या में थे, तो भी उदयन उनसे शाम तक लड़ता रहा। लड़ता-लड़ता वह मूर्छित हो गया। उस हालत में वह उनके हाथ आया।

घायल उदयन को एक पाल्की में वे उज्जयनी ले गये। हँसक उसके साथ गया था। उसने आँखों देखा विवरण यौगन्धराय को बताया।

"मैं राजा का नमक खा रहा हूँ। फिर भी मैं उनकी पर्याप्त रक्षा न कर सका।

वह उस पगडंडी से ही नर्मदा नदी तक गया। नर्मदा पार करके महगम्भीर पर्वत पहुँचा। वहाँ एक आधे सूखे तालाब में कुछ हाथी अपने ऊपर कीचड़ डाल रहे थे।

इतने में एक सैनिक ने उदयन के पास आकर कहा—"महाराज, यहाँ से दो मील की दूरी पर मैंने एक हाथी देखा है। सिवाय दान्त और नाखूनों के, उसका सारा शरीर नीला है। वह सागून के पेड़ों के पीछे घूम फिर रहा है।" राजा को उस दुष्ट की बात पर विश्वास हो गया। राजा ने सोचा कि उसने हाथियों के चक्रवर्ती

उनको छुड़ाकर लाना मेरा कर्तव्य है। उनको छुड़ाने के लिए अगर मुझे अपने प्राण भी देने पड़े तो मैं खुशी खुशी दे दूँगा। देखो, अन्तःपुर की स्त्रियाँ रो रही हैं। इस तरह वे मन्त्रियों की असमर्थता संसार के सामने प्रकट कर रही हैं।" यौगन्धराय ने कहा। फिर उसने प्रतिज्ञा की कि यदि मैंने राजा को विमुक्त न किया तो मेरा नाम यौगन्धराय नहीं है।

उसी समय एक आश्चर्यजनक बात हुई। ब्राम्हण भोजन कर रहे थे कि एक बावले ने जोर से हँसते हुए कहा—"महाशयो आराम से भोजन कीजिए। इस कुटुम्ब पर जो आपत्ति आ रही है, वह टल जायेगी और उसके बदले इस कुटुम्ब को सौभाग्य मिलेगा।" कहकर वह अन्तर्धान हो गया। एक ब्राम्हण ने उस पागल के कपड़ों को ले जाकर यौगन्धराय को दिखाया। और उसने जो कुछ गुज़रा था सुनाया। यौगन्धराय को आश्चर्य हुआ। जब उसने वे कपड़े पहिने तो उसको कोई पहिचान न सका। उसने हँसक को और ब्राम्हण का वेश पहिनने के लिए कहा।

* * *

उधर उज्जयनी में, महाराजा प्रद्योत उदयन के पकड़े जाने की खबर की उत्कंठापूर्वक प्रतीक्षा कर रहा था। उसकी लड़की वासवदत्ता से विवाह करने के लिए मगध, वंग, काशी, सौराष्ट्र, शूरसेन देशों के राजकुमारों ने अपने दूत भेज रखे थे। वासवदत्ता का किसके साथ विवाह किया जाय, राजा और रानी निश्चय न कर पा रहे थे कि उदयन के पकड़े जाने की खबर मिली। जब उसे मालूम हुआ कि उदयन घायल था, उसने तुरत उसकी चिकित्सा की व्यवस्था करके आज्ञा दी कि उसको ऐसी कैद में रखा

जाये, जहाँ उसको सब सुख-सुविधा मिल सकें। उसने नौकरों से कहा—"उनकी आदरपूर्वक देखभाल करो। उनके सामने यह न कहो कि वे युद्ध में हरा दिये गये हैं या कैदी हैं।"

वत्स राजा हाथियों को पकड़ने के लिए जिस घोषवती नामक वीणा का उपयोग करता था, वह प्रद्योत को मिल गई। उसने उसको अपनी लड़की को उपहार में दिया।

"हमारे लड़की से विवाह करने के लिए इतने राजाओं ने दूत भेजे हैं। पर इस वत्स राजा ने किसी को न भेजा, देखा आपने!" रानी ने कहा।

"उसे इस बात का बड़ा अभिमान है कि वह भरत वंश का है। वेदों में पारंगत है। संगीत में अद्वितीय है। युवक है, सुन्दर है और उसकी प्रजा उसके लिए प्राण भी छोड़ने के लिए तैयार है। बड़ा घमंडी है।" प्रद्योत ने कहा।

"हमारे जामाता होने लायक सब गुण उसमें विद्यमान हैं।" रानी ने कहा।

"तुम क्यों उस शत्रु की प्रशंसा करती हो, जो हमारी बात सुनता तक नहीं।" राजा ने उसे फटकारा।

* * *
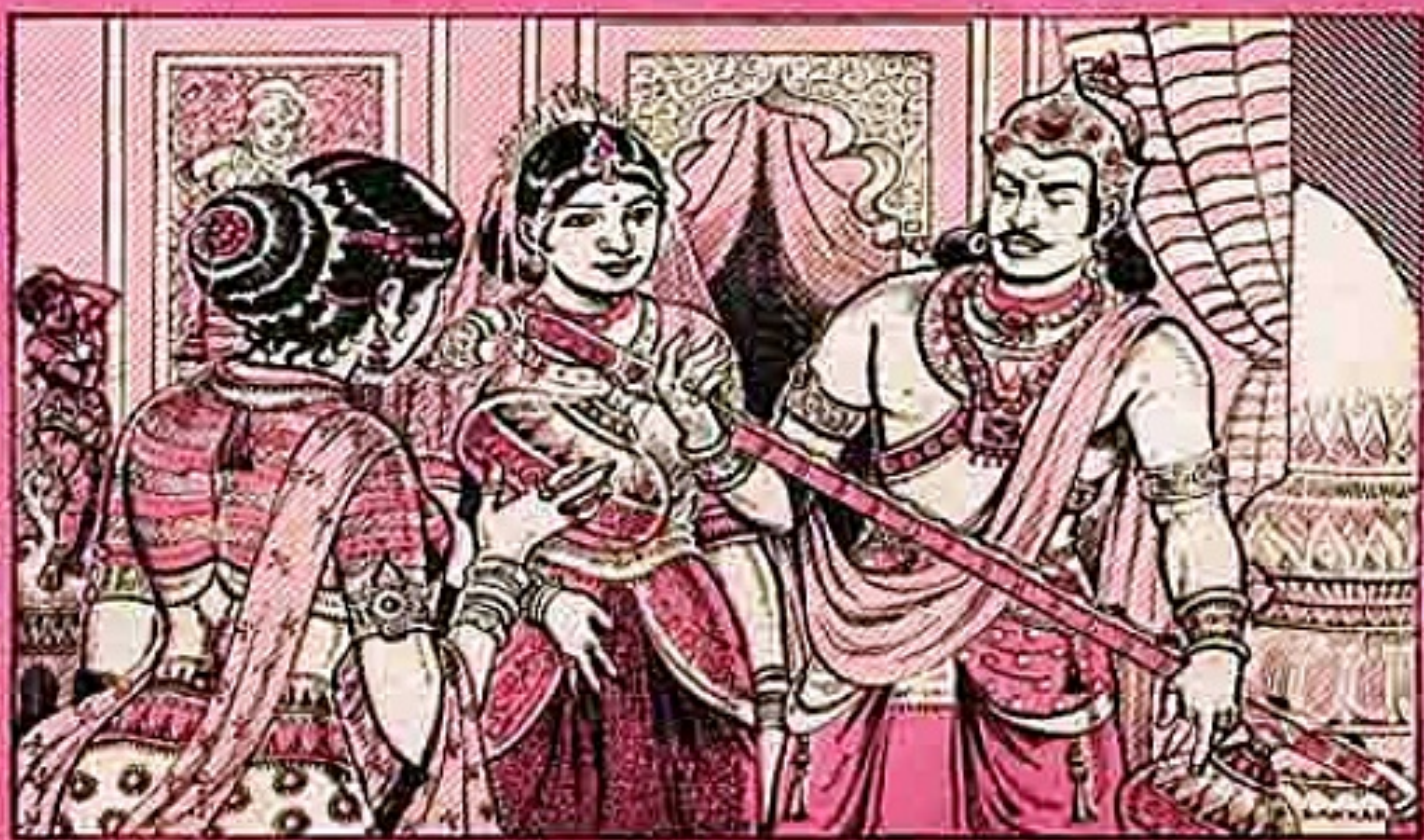
यौगन्धराय पागल का वेष धारण कर जब वत्स राजा को छुड़वाने के लिए निकला, तो उसके साथ विदूषक बसन्त था, भिखारी के वेष में। और मन्त्री रूपवन्त बौद्ध श्रमण के वेष में उज्जयनी आये। वे राजा के विमोचन के लिए प्रयत्न कर रहे थे। पर उनके प्रयत्न अभी तक सफल न हुए थे।

एक दिन जब वे कात्यायिनी मन्दिर में बातें कर रहे थे, तो बसन्तक ने राजा के बारे में खबरें सुनाते हुए कहा कि उनके घाव भर गये थे। उन्होंने स्नान भी कर लिया था।

"राजा को हमें कल ही यहाँ से ले जाना होगा। नलगिरी कहाँ बाँधा जाता है। कहाँ उसे नहलाया जाता है। और उसे कहाँ और क्या खिलाया जाता है, कहाँ सुलाया जाता है, सब मालूम कर लिया है। गजशाला के पास की झोंपड़ी को जला देने की व्यवस्था की है। तुम तो जानते ही हो कि हाथियों को आग से कितना डर होता है। उनको और डराने के लिए मन्दिर में ढोल दमाके, घंटे, नगाड़े बजवायेंगे। जब इस तरह वे बिदक उठेंगे तो उनको शान्त करने के लिए

जब बाकी दोनों अचरज करने लगे, तो उसने यह बात यों सुनाई।

"गत कृष्णाष्टमी के दिन राजकुमारी वासवदत्ता पालकी में बैठकर अपनी परिचारिकाओं के साथ दक्षिण के आलय की ओर निकली। क्योंकि वह कन्या थी। इसलिए उसने सिर पर परदा भी न रख रखा था। मगर तब राजमार्ग पानी से भरा पड़ा था—इसलिए उसकी पालकी को कारागृह की ओर से जाना पड़ा। ठीक उसी समय हमारे राजा, कारागृह रक्षक की अनुमति से बाहर खड़े थे। जहाँ वे खड़े थे, कहार पालकी लेकर वहीं रुके, हमारे राजा ने वासवदत्ता को ध्यान से देखा। देखकर वे उससे प्रेम भी करने लगे। इसलिए उनको हमारी योजना नहीं जंची। क्योंकि प्रद्योत उनको धोखा देकर लाया था, इसलिए वासवदत्ता को ले जाकर, वे उनसे बदला लेंगे।"

यह सुन यौगन्धराय को कोप और आश्चर्य हुआ। "कैद में हैं, हथकड़ी बेड़ियों में हैं और दूसरी ओर यह प्रेम की बीमारी हो रही है।" उसने कहा।

प्रद्योत को हमारे राजा से प्रार्थना करनी होगी। तब राजा कैद से निकलकर अपनी वीणा से नलगिरि को शान्त करेगा। इसके बाद वह उसी पर सवार होकर जल्दी जल्दी कोशाम्बी जायेगा। जो हाथी द्वारा पकड़ा गया, वह हाथी द्वारा ही छुड़ाया जायेगा। तुम जैसे भी हो, कल राजा से मिलकर इस योजना को कार्यान्वित करो।" यौगन्धराय ने वसन्तक से कहा।

वसन्तक ने कुछ सोच-साचकर एक आपत्ति की—"वत्स राजा शायद इस योजना के बारे में अनुमति न दें।"

"उनका विश्वासपात्र होकर जो कुछ हमको करना था, वह हमने कर दिया है। अब चलो वापिस चलें।" वसन्तक ने कहा।

"क्या वसन्तक ही ये बातें कर रहा है! वसन्तक, तुम यह कैसे कह पाये कि राजा को इस स्थिति में छोड़कर चले जायें।" यौगन्धराय ने पूछा।

"अच्छा, तो खैर बुढ़ापा आने तक यहीं बैठे-बैठे समय काटें।" वसन्तक ने कहा।

"हाँ काटना पड़ जाय तो कोई बात नहीं, पर जब तक काम नहीं हो जाता हमें प्रयत्न करते जाना चाहिये।" यौगन्धराय ने सोचा।

"जिस दिन हम राजा को कारागृह से और वासवदत्ता को अन्तःपुर से निकाल सकेंगे उसी दिन हमें सफलता मिलेगी।" वसन्तक ने निराश होकर कहा।

"वसन्तक क्या खूब कहा तुमने! यौगन्धराय इन दोनों को बाहर निकालकर ऐसा उपाय सोचो कि जिस तरह अर्जुन सुभद्रा को ले गया था। उसी तरह राजा वासवदत्ता को ले जायें।" रूपवन्त ने कहा।
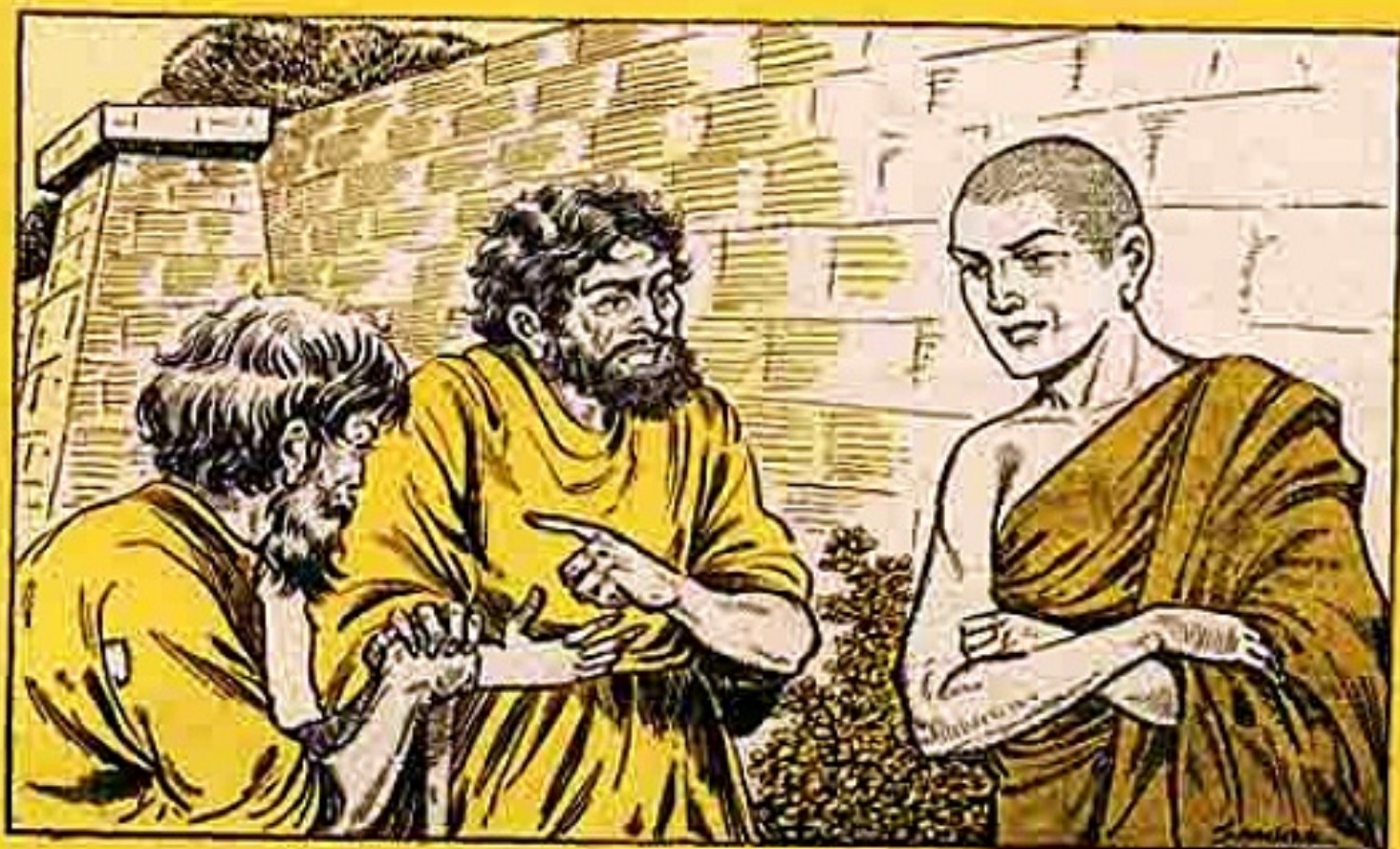
"अगर मैं कोई उपाय न बताऊँ तो मेरा नाम यौगन्धराय नहीं है।"

* * *

उसने अपना वचन पूरा किया। उसका सेवक, जिसका नाम गात्रसेवक था, वासवदत्ता के हाथी, चंडवती का महावत नियुक्त हुआ। एक दिन वह ताड़ी की दुकान पर गया। और उसने इस तरह अभिनय किया जैसे पीकर नशे में हो। उसको खोजते हुये सिपाही आये "राजकुमारी स्नान के लिये जारही हैं। हाथी तैयार करो।" इसी समय वत्स राजा वासवदत्ता को लेकर चला गया। प्रद्योत के सैनिक जब वत्सराजा को पकड़ने आये तो यौगन्धराय ने पागल का वेश उतार दिया। तल्वार लेकर उनसे युद्ध करके उनको रोक दिया। आखिर वह तल्वार खो बैठा और उनके द्वारा पकड़ा गया।

जब उज्जयनी का मन्त्री भरत रोहक उससे मिला, तो यौगन्धराय ने कहा—"मैं उस अश्वत्थामा की तरह खून से लथपथ हूँ, जिसने अपना पिता की मृत्यु का बदला लिया था।" "एक तो धोखा दो, फिर उस पर शेखियाँ मारो।" भरत रोहक ने ताना मारा। "तुम ही वत्सराजा को नकली हाथी के साथ लाये थे न?" यौगन्धराय ने पूछा।

इतने में प्रद्योत ने यौगन्धराय को एक सुवर्ण कलश उपहार में भेजते हुये कहा—"आप के कारण मेरा कोई अपकार नहीं हुआ है। मैं आपके गुणों से सन्तुष्ट हूँ।" उसकी उदारता की यौगन्धराय ने भी प्रशंसा की।

इसके बाद राजमहल में उदयन और वासवदत्ता की मूर्तियों को रखकर उनका विवाह सम्पन्न किया गया।

अहंकार

कलिंग राजा की लड़की मैनावती बहुत सुन्दर थी। इस कारण उसको बहुत अभिमान भी था। जब वह सयानी हुई तो उसका पिता उसके विवाह के लिए प्रयत्न करने लगा। उसके उपयुक्त राजकुमारों के चित्र मन्त्रियों ने मँगवाये। परन्तु मैनावती ने किसी को न स्वीकार किया। आखिर मन्त्री ऊब गये। राजा भी ऊब गया। एक अच्छा दिन निश्चय करके कलिंग राजा ने अपनी लड़की के स्वयंवर के बारे में सब जगह खबर भेजी।

राजा का ख्याल था कि अगर सब राजकुमार एक जगह एकत्रित हुए तो मैनावती उनमें से एक को चुन लेगी। और उसका भार कम हो जायेगा।

स्वयंवर के लिये सब राजा आये। सुन्दर मैनावती से विवाह करने के लिए सब लालायित थे। सभा भवन में आगन्तुक पंक्ति में बैठे हुए थे। राजकुमारी मैनावती ने आकर एक एक को देखा। किसी को कहा कि मोटा है, किसी को कहा कि बोरे की तरह है। किसी को कहा कि सांप की तरह दुबला है। किसी को बावला बताया तो किसी को कुछ....उसने किसी को भी स्वीकार न किया।

आखिर बैठे हुए व्यक्ति में कोई भी नुख्स न था। वह बहुत खूबसूरत था। फिर भी मैनावती ने उसकी मूँछों को देखकर कहा—"मुझे यह मूँछोवाला मेंढ़ा नहीं चाहिए।" जितने राजा आये थे वे अपने घर चले गये।

कलिंग राजा ने ऊबकर अपनी लड़की से कहा—"देख, तेरा घमंड चूर-चूर करता हूँ। कल सवेरे जो हमारे घर के सामने

पहिले पहल भिखारी या गायक आयेगा उसी से मैं तेरी शादी कर दूँगा।"

जैसे राजा ने कहा था अगले दिन सवेरे मुँह अन्धेरे एक भिखारी राजा के महल के सामने खड़ा खड़ा कुछ गा रहा था। उसकी बहुत बड़ी दाढ़ी थी। बदन पर भी चीथड़े थे।

उसके वहाँ खड़े होते ही सैनिक उसको बुलाकर अन्दर ले गये। राजपुरोहित ने क्षण में उससे राजकुमारी को मंगलसूत्र पहिनाया। मैनावती रोई-धोई। पर राजा का दिल बिल्कुल न पिघला। विवाह की विधि समाप्त होते ही उसने भिखारी से कहा—"यह लो, पाँच रुपये। अपनी पत्नी को लेकर कहीं चले जाओ। तुम अपना मुख फिर कभी मुझे न दिखाना। इस तरफ भूल कर भी न आना।"

मैनावती को लाचार हो अपने पति के साथ जाना पड़ा। भगवान की दया से वह भिखारी कोई खराब आदमी न था। मैनावती ने सोचा कि यह गनीमत थी। उनके कुछ दूर जाने के बाद एक बड़ा घना जंगल आया। "यह जंगल किसके राज्य में है?" मैनावती ने अपने पति से पूछा।

"जिसे मूँछोवाला मेंढ़ा कहते हैं न यह उस राजा का है।" दाढ़ीवाले ने कहा। फिर वे कितने ही खेत, बाग, पार करके एक सुन्दर नगर में आये। अब उसे पता लगा कि वे सब मूँछोवाले मेंढ़े के थे मैनावती को बहुत पश्चात्ताप हुआ।

आखिर वे एक झोपड़ी के पास आये। "मुझे यहाँ क्यों लाये हो?" मैनावती ने अपने पति से पूछा।

"यह मेरा घर है, यह अब से हमारा घर है।" दाढ़ीवाले ने कहा।

मैनावती को उस घर को साफ़ करना पड़ा। चुल्हा स्गाकर खाना तैयार करना पड़ा। दाढ़ीवाला कुछ बाँस काट लाया। उन्हें काटकर, उनसे टोकरे आदि बनाना उसने अपनी पत्नी को सिखाया। उस काम के कारण उसकी अंगुलियों में दर्द हुआ।

"अच्छा, तो सीने का काम करो।" उसने उसके कपड़ों की मरम्मत की। तब उसकी अंगुली में सूई चुभ गई। उसे दर्द हुआ। दाढ़ीवाला अपनी पत्नी को इस तरह दर्द सहता न देख सका।

उसने एक पर एक घड़ा रखकर, कई सारे घड़े देकर कहा—"इन्हें ले जाकर बेच आओ।" वह उन्हें एक जगह रखकर बेचने बैठी थी कि उस तरफ़ एक शिकारी घोड़े पर बड़ी तेज़ी से आया। उसके घोड़े ने मैनावती के घड़े चूर चूर कर दिये। मैनावती रोती रोती अपने पति के पास गई। उसने जो कुछ गुज़रा था, अपने पति से साफ साफ कहा।

"घड़े बेचना भी तुम्हारे लिये ठीक न रहा। राजा की रसोई में शायद तुम्हें कोई नौकरी मिल सके, जाकर पता लगाता हूँ। वहाँ कुछ मेरे जाने पहिचाने लोग हैं। कोशिश करूँगा।" दाढ़ीवाले ने मैनावती से कहा।

यह मैनावती को सबसे अधिक अपमानजनक बात लगी। परन्तु राजा की भोजनशाला में उसे काम करना ही पड़ा। वहाँ दिन-भर काम करके घर आते समय वहाँ से तरह-तरह के पकवान बाँधकर पति के लिए वह लाया करती।

एक सप्ताह बाद राजमहल में तहल्का मचने लगा। सुना गया कि राजा की शादी थी। दुल्हिन कौन थी, किसी को न मालूम था। मैनावती दिन-भर काम

करके, जब शाम को घर जाने लगी, तो रसोइये ने कहा—"सारा आंगन दिये आदि से सजाया गया है। आओ, देख आयें।" दोनों आंगन की ओर गये। वे खड़े होकर, झाँक-झाँककर देख रहे थे कि कहीं से "मूछोंवाले मेंढ़े" ने आकर रसोइये से पूछा—"कौन है यह? झाँककर देख रही है इसलिए एक नाच ही करके जाने को कहो।"

मैनावती ने घबराते हुए आगे कदम रखा। राजा के संकेत करने पर वाद्य बजानेवालों ने वाद्य बजाये। मैनावती नृत्य करना जानती थी। इसलिए यद्यपि वह नृत्य न करना चाहती थी, तो भी उसने लाचार हो नृत्य करना शुरु किया।

उसने जब नृत्य करना शुरु किया तो साड़ी में बँधी पकवानों की पोटलियाँ नीचे गिर पड़ीं। सब ओर से हँसे। अपमानित होने के कारण मैनावती के दुख की सीमा न रही।

राजा उसका हाथ पकड़कर अपने कमरे में ले गया। "दुखी न हो। मुझे पहिचाना नहीं? मूँछोंवाला मेंढ़ा हूँ। दाढ़ीवाला हूँ। तेरे घड़ों को घोड़े के पैरों के नीचे कुचलने वाला मैं ही हूँ। तुम्हारे पिता ने मुझे जानकर ही तुम्हारी मुझसे शादी की है। इसलिए न तुम्हे कोई नुक्सान हुआ है, न कोई आपत्ति ही तुम पर आ पड़ी है। यह दिखाने के लिए कि किसी को इतना अहंकार नहीं शोभता, मैंने यह नाटक खेला है। समझ में आया?"

तब तक मैनावती का अहंकार काफूर हो चुका था। उसने अपने पति के साथ गृहस्थी इस तरह की कि कहा जा सकता था कि उससे अच्छी कोई गृहणी न थी।

छुपाया हुआ वसीयतनामा

पाँच छः सौ वर्ष पहिले चीन के एक प्रान्त में "निशा चिचेन" नाम का राज-प्रतिनिधि हुआ करता था। उसने बहुत-सा धन, घर, और खेत आदि जमा कर लिए। उसके एक लड़का था, जिसका नाम शान ची था। उसकी पत्नी मर गई थी। फिर उसके बाद राज-प्रतिनिधि ने अपने पद से इस्तीफ़ा दे दिया और घर और खेत देखने लगा।

"पिता जी! अब आप वृद्ध हो रहे हैं। आराम कीजिये। ये सब काम मेरे जिम्मे छोड़ दीजिये।" शान ची ने कहा।

"जब तक मेरे शरीर में प्राण हैं, तब तक यह नहीं हो सकता कि मेरा काम कोई और देखे।" "नी" ने कहा। यही नहीं, उसने एक ऐसा काम भी किया, जो लड़के के लिए बिल्कुल असह्य था।

एक दिन वह ग्राम के समीप टहल रहा था कि उसे घाट पर एक सोलह साल की लड़की और उसकी नानी दिखाई दी। उस लड़की का नाम मेय था। क्योंकि छुटपन में ही उसके माँ बाप गुज़र गये थे, इसलिए उसकी नानी ही उसका पालन पोषण करती आई थी। मेय की अभी तक सगाई न हुई थी। उसे देखकर "नी" को बहुत खुशी हुई। उसने बुढ़िया से कहा कि वह उस लड़की का उसके साथ विवाह कर दे।

यह सुन बुढ़िया प्रसन्न हुई। मेय ने भी कोई आपत्ति न की। "नी" मेय से शादी करके, उसको अपने घर ले आया। "नी" आसानी से जान गया कि मेय छोटी उम्र की होती हुई भी अक़्ल में बहुत तेज थी।

ताड़ गया कि वह क्यों बिगड़ा हुआ था। वह सोच रहा होगा कि धन सम्पत्ति में उसके साथ हिस्सा बटाने के लिए एक और आ गया था। कभी न कभी वह इस बच्चे को धोखा देकर ही रहेगा।

शान शू जब पाँच साल का हुआ तो उसे गुरु के पास भेजा गया। उसी गुरु के पास शान ची का लड़का भी पढ़ रहा था। कहीं ऐसा न हो कि उसके लड़के की उससे मैत्री हो जाये शान ची ने अपने लड़के को उस पाठशाला से हटा लिया और एक और पाठशाला में भरती करवा दिया। यह देख "नी" को बहुत गुस्सा आया उसने लड़के को खूब डाँटना फटकारना चाहा। पर यह सोच कि उस दुष्ट से बातें करने से कोई फायदा न था उसने कुछ न कहा।

इसके कुछ दिनों बाद "नी" को पक्षपात हुआ। वैद्य ने देखकर कहा— "पक्षपात की कोई चिकित्सा नहीं है। कुछ दिन यूँ ही चारपाई पर पड़े रहना होगा तब जाकर मौत आयेगी।"

शान ने आकर देखा कि नी उठ फिर न सकता था, वह अपना अधिकार

न शान ची और न उसकी पत्नी को ही "नी" का बुढ़ापे में शादी करना भाया।

जल्दी ही मेय गर्भिणी हुई। उसने एक लड़के को जन्म दिया। पिता ने उसका नाम "शान शू" रखा। शान ची का खुश होना तो अलग कि उसके एक भाई हुआ था वह अपनी सौतेली माँ को कुल्टा बताने लगा, और यह भी कि शान शू सचमुच उसका भाई न था।

शान ची की बकवास उसके पिता के कानों तक भी पहुँच रही थी। परन्तु उसने बाहर कुछ न कहा। वह यह भी

चलाने लगा। मेय और शान शू बूढ़े के पास ही रहते।

"नी" ने अपने बड़े लड़के शान ची को बुलाकर, उसको एक पुस्तक दी। उस पुस्तक में "नी" की धन-सम्पत्ति का पूरा ब्यौरा था। उसने अपने बड़े लड़के से कहा—"शान शू पाँच वर्ष का लड़का है। कुछ दिन तक उसका किसी न किसी को पालन-पोषण करना होगा। उसकी माँ भी इतनी बड़ी नहीं है कि खुद जमीन जायदाद की देख-भाल कर सके। इसलिए सम्पत्ति में मैं उनको भाग नहीं दे रहा हूँ। सब तेरे नाम ही लिख रहा हूँ। शान शू जब बड़ा हो जाये तो उसकी शादी करो, उसको दस एकड़ भूमि भी दो और एक छोटा घर ताकि उसको रहने, खाने-पीने की दिक्कत न हो। ये सब बातें मैंने इस पुस्तक में लिख दी हैं। इसमें जैसा लिखा है वैसे जमीन जायदाद का तुम बँटवारा कर सकते हो। अगर मेरी दूसरी पत्नी फिर शादी करना चाहे तो करने दो। अगर वह विधवा रहकर अपने लड़के के साथ रहना चाहे तो तुम मना न करो। मेरे गुज़र जाने के बाद यदि तुमने मेरे कथनानुसार किया तो तुम्हारे मन को शान्ति मिलेगी।"

"पिताजी, आप फिक्र न कीजिए। जैसे आप कहेंगे, मैं ठीक वैसा ही करूँगा।" कहकर शान ची, पिता की दी हुई पुस्तक लेकर खुशी-खुशी अपने कमरे में चला गया। उसके चले जाने के बाद मेय ने अपने पति से पूछा—"क्या यह आपका पुत्र नहीं है? क्यों आपने सब कुछ बड़े लड़के को ही दे दिया है? हम कैसे जिन्दगी बसर करेंगे?" वह आँसू बहाने लगी।

"शान ची का विश्वास नहीं किया जा सकता। अगर आज मैंने अपनी सम्पत्ति दोनों को समान-समान बांट दी तो वह छोटे लड़के को मरवा भी सकता है। अगर सब उसी को दे दिया गया तो उसे ईर्ष्या न होगी। क्योंकि तुम भी अभी छोटी हो, इसलिए छोटे लड़के के भरण-पोषण की जिम्मेवारी मैंने उसी पर छोड़ दी है। मेरे गुज़र जाने के बाद, तुम यहीं रहकर जिन्दगी भर कष्ट न झेलो—किसी से शादी कर लेना।"

"हमारा भी प्रतिष्ठित घराना है। मैं फिर शादी करके क्या अपने लड़के से दूर जाऊँगी? दुख हो या सुख, मैं अपने लड़के के साथ ही रहूँगी।" मेय ने कहा।

यह सोचकर कि वह अपना निश्चय न बदलेगी, "नी" ने उससे कहा—"अगर यही बात है तो मैं देखूँगा कि तुम्हारे लड़के को किसी प्रकार की कमी न हो।" कहकर उसने अपने तकिये के नीचे से एक पुलिन्दा निकाल कर दिया।

"यह मेरा चित्र है। इसमें एक रहस्य है। यह किसी को मत दिखाना। अपने पास ही रखना। जब तुम्हारा लड़का बड़ा

हो जाये और अगर शान ची उसकी परवाह न करे तो इस प्रान्त में समझदार न्यायशील न्यायाधिकारी जब आये, तो उसे यह दिखा कर फरियाद करना। इस चित्र को देखने के बाद वह ऐसा फैसला करेगा कि तुम्हें और तुम्हारे लड़के को कोई कठिनाई न होगी।" नी यह कहने के कुछ दिनों बाद गुजर गया।

पिता के मर जाने के बाद शान ची ने घर की सब चाबियाँ ले लीं। बूढ़े की अन्त्येष्टि क्रिया के बाद उसने इस बहाने की मकान की मरम्मत करवानी है, सौतेली माँ और भाई को आंगन में, एक तीन कमरोवाले कुटीर में रहने के लिए कहा। वे वहाँ रहने लगे। रोज उनके लिए आवश्यक चावल तो भिजवा दिये जाते, पर शाक-सब्जी न भेजी जाती। शाक-सब्जी व अन्य चीज़ों के लिए मेय सिलाई का काम करके पैसा कमाती। लड़के को पासवाले घर में पढ़ने के लिए भेजती।

शान ची ने एक आदमी को सौतीली माँ के पास यह समझाने के लिए भेजा कि वह फिर शादी कर ले। शादी करानेवालों को भी उसके पास भेजा। पर मेय ने

सबसे कह दिया कि कुछ भी हो, मैं फिर से शादी न करूँगी।

कई साल बीत गये। शान शू की उम्र चौदह वर्ष की हुई। उसने एक दिन अपनी माँ से कहा—"माँ, मुझे रेशमी कपड़े सिलाकर दो।" माँ ने कहा कि पैसे न थे। "मेरा पिता राजप्रतिनिधि था। उनके दो ही हम लड़के हैं। अगर भाई के पास धन है तो मेरे पास नये कपड़ों के लिए पैसा क्यों नहीं है! अगर तुम्हारे पास नहीं है, तो मैं भाई से माँगूँगा।" उसने कहा। माँ ने उससे कहा कि वह कभी भी वैसा न करे। माँ को बिना बताये वह भाई के पास गया और उससे उसने कहा—"पिता बड़े आदमी थे। मेरे कपड़े देखकर सब मेरी हँसी उड़ा रहे हैं। भैया, मुझे रेशम के कपड़े दिलवाओ।"

"अगर नये कपड़े चाहते हो तो अपनी माँ से पूछो।" शान ची ने कहा।

"सम्पत्ति की देख भाल तो तुम कर रहे हो, मेरी माँ तो नहीं कर रही है!" शान शू ने कहा।

"धूर्त कहीं का तुम कपड़े माँगने आये हो या अपना हिस्सा? सम्पत्ति मेरी है, मेरे बच्चों की है। तू कौन होता है बीच में!" शान ची ने उसके सिर पर मारा। चोट के कारण सूजन आ गई। वह रोता-रोता अपनी माँ के पास गया।

"अच्छा ही हुआ, मैंने तुम से कहा न था कि उसके पास न जाना।" कहते कहते माँ ने उसका सिर आँसुओं से भिगो दिया। फिर उसने शान ची के पास एक दासी द्वारा कहला भेजा—"लड़का है। अनजाने में कुछ कह गया है। उसकी बातों पर गुस्सा न होओ।"

तब भी शान ची का गुस्सा शान्त न हुआ। उसने अगले दिन अपने बन्धुओं को बुलाकर मेय और शान के सामने ही उनसे कहा—"आप यह न समझिये कि मैं शान शू और उसकी माँ का पालन-पोषण नहीं करना चाहता हूँ। मैं उनको यहाँ से निकालना भी नहीं चाहता हूँ। परन्तु शान शू ने आकर कल मुझसे ज़मीन जायदाद के बारे में झगड़ा किया। जब अभी ही यह सब वह कर रहा है तो न मालूम आगे जाकर क्या करे! इसलिए आप सब के सामने जो मेरे पिता उनके नाम लिख गये हैं, उसे दे देता हूँ। पूर्व की तरफ़ का घर उनत्तीस सेन्ट ज़मीन अब से उसकी है। पिताजी ने जो कुछ वसीयतनामा में लिखा है, उससे मैं तनिक भी कम नहीं दे रहा हूँ। आप सब इसके गवाह हैं।" कहकर उसने पुस्तक दिखाई, जो उसके पिता दे गये थे।

इसके लिए सब मान गये। कई को लगा कि यह अन्याय था। फिर भी उन्होंने कुछ न कहा।

इसके बाद, माँ और लड़का अपना बोरिया बिस्तर लेकर पूर्ववाले मकान में चले गये। वह बहुत पुराना घर था। एक दो कमरे साफ़ करवाकर वे उसी में रहने लगे। जो उनके भाग में ज़मीन आई थी, वह भी कतई बंजर थी। जिस साल फसल ठीक न होती, उसमें से एक फूटा दाना भी न मिलता।

कुछ समय बीता। मेय को पता लगा कि उनके गाँव में एक बहुत ही समझदार नया न्यायाधिकारी आया था। उस गाँव में कुछ दिन पहिले दर्ज़ी की किसी ने हत्या कर दी थी। दर्ज़ी की पत्नी ने ग्राम के एक आदमी पर हत्या का अपराध आरोप करके न्यायाधिकारी से फरियाद

की। उस न्यायाधिकारी ने उसकी फरियाद पर विश्वास करके अपराधी को मौत की सज़ा दे दी। इस बीच यह नया न्यायाधिकारी आया। उसने असली हत्यारे का पता लगाया और निर्दोष अपराधी को छुड़वा दिया। इस न्यायाधिकारी की ग्राम में हर कोई प्रशंसा कर रहा था।

इस जैसे न्यायाधिकारी से ही मुझे न्याय मिल सकेगा, यह सोचकर वह अपने पति का चित्र उसके पास ले गई। उससे कहा—"शान ची ने मेरे पति की सारी ज़मीन-जायदाद हड़प ली है। मेरे लड़के को आधा हिस्सा नहीं दे रहा है। आप कृपया न्याय कीजिये। मौत के समय मेरे पति ने मुझे यह चित्र दिया और कहा कि उनका असली वसीयतनामा इसमें है। यह भी कहा कि समझदार न्यायाधिकारी इसका रहस्य जान सकेगा। इसीलिए इसको मैं आपके पास लायी हूँ।"

न्यायाधिकारी ने उसको भेज दिया। वह काफ़ी देर तक चित्र देखता रहा परन्तु उसे कुछ समझ में न आया। फिर जब उसने कपड़े से चिपके हुए चित्र को उखाड़ा तो उस के नीचे यों लिखा

था—"मैं बूढ़ा हो गया हूँ। मेरा दूसरा लड़का, शान शू बच्चा है। मेरा बड़ा लड़का दुष्ट है। वह अपने भाई के साथ धोखा कर सकता है। मैं अपनी जमीन, और दो मकान शान ची को दे रहा हूँ। और पूर्व की ओर का घर, शान शू को। यह घर यद्यपि पुराना है परन्तु इसके पूर्व की दीवार में पाँच मर्तबानों में बीस मन चान्दी, और छै मर्तबानों में चार मन सोना है। भूमि के बदले में यह चान्दी और सोना शान शू को दे रहा हूँ।" उस पर बूढ़े का हस्ताक्षर और तिथि थे।

अगले दिन न्यायाधिकारी ने शान ची को बुलवाया। उसने उससे कहा—"तुम पर तुम्हारी सौतेली माँ ने शिकायत की है। तुम अपने सौतेले भाई को पिता की सम्पत्ति का ठीक हिस्सा नहीं न दे रहे हो!"

"मेरे पास मेरे पिता का वसीयतनामा है। उसमें मेरे पिता ने जो कुछ देने के लिए लिखा था, वह सब मैंने दे दिया है। उस वसीयतनामा को आप भी देख सकते हैं।" शान ची ने कहा।

"ठीक, मैं कलर आक तुम्हारे पिता का वसीयतनामा देखकर फैसला करूँगा।"

न्यायाधिकारी ने कहा। शान ची को भेजकर, उसने मेय के पास खबर भिजवाई कि कल सवेरे, वह अपने लड़के के साथ शान ची के घर में हाज़िर हो।

शान ची ने अगले दिन अपने घर की बैठक खूब सजाई। न्यायाधिकारी के बैठने के लिए एक वेदिका भी बनवाई। उस पर सिंह चर्म बिछवाया। अपने बन्धुओं को उसने पहिले ही बुलवा भेजा था।

जल्दी ही पाल्की में सिपाहियों को साथ लेकर न्यायाधिकारी आया। कहारों ने घर के द्वार के पास पाल्की को उतारा।

न्यायाधिकारी द्वार तक आया। फिर उसने इस तरह झुककर स्वागत किया कि कोई आया हो। रास्ता दिखाते हुए उसने कहा—"आइये, पधारिये।" फिर वह किसी को साथ लेकर आये हुए आदमी की तरह बातें करता अन्दर आया। और उस आदमी से कहा—"उस आसन पर बैठिये।" उसने वह आसन दिखाया जिस पर शेर का चर्म बिछा हुआ था। वह एक और कुर्सी पर बैठ गया। वह तब भी, यों बोल रहा था जैसे किसी से बातें कर रहा हो। "आपकी पत्नी ने मुझसे फरियाद की है। उस बारे में मैं क्या करूँ! हूँ, हूँ, तो यह बात है। आपके लड़के का व्यवहार बिल्कुल ठीक नहीं है। आप ने अपने छोटे लड़के को क्या देना चाहा था! पूर्व का घर! फिर वह विचारा जिन्दगी-भर कैसे बसर करेगा! हाँ तो यह कहिए। मैं वही करूँगा। अच्छा। तो क्या वह सब आपके छोटे लड़के का ही है! आपने जो कुछ कहा है वही मैं करूँगा।"

यह देख कि न्यायाधिकारी किसी भूत से बातें कर रहा था वहाँ एकत्रित लोग सब घबराये। वे उससे बात करने के

लिए ही डरे। आखिर वह खड़ा हुआ। झुककर उसने पूछा—"अब मुझे जाने की अनुमति दीजिये।" फिर सीधे खड़े होकर उसने चारों तरफ़ देखा। उसने शान ची की ओर मुड़कर कहा—"अभी तुम्हारे पिता मुझ से बातें कर रहे थे और अभी वे उधर चले गये हैं। तुमने हमारी बातचीत सुनी थी न!"

"नहीं तो!" शान ची ने कहा।

"ऊँचा कद्दावर आदमी। गोल मुँह। गाल की हड्डी कुछ उभरी हुई थी। बादाम-सी आँखें। लम्बी लम्बी भौंहें। बड़े कान। बिखरी बिखरी-सी सफ़ेद दाढ़ी और ऐसी टोपी पहिने हुए थे, जो अधिकारी पहिनते हैं। काले बूट। लाल तहमद। कमर में सोने की पेटी। वे राज-प्रतिनिधि "नी" ही हैं न!" न्यायाधिकारी ने कहा।

"हाँ, जब जीवित थे, तो ठीक वैसे ही थे।" बन्धुओं ने कहा। यह कोई न जानता था कि न्यायाधिकारी ने चित्र के आधार पर यह वर्णन किया था। इसलिए सब ने विश्वास कर लिया कि उनको भूत होकर राजप्रतिनिधि ही दिखाई दिया था।

"आपके पास दो घर हैं। पूर्व में एक और घर है न? चलो वहाँ चलें, वहाँ बाकी बात बताऊँगा।" न्यायाधिकारी ने कहा। शान ची उसको साथ लेकर पूर्ववाले मकान में गया।

"इस घर को अपने भाई को देने में कोई आपत्ति है?" न्यायाधिकारी ने पूछा। शान ची ने कहा—"नहीं जी।"

न्यायाधिकारी ने घर के बीचवाले कमरे में बैठकर वह पुस्तक देखी। "इसमें सब साफ़ साफ़ लिखा है। शान शू को इसके सिवाय और कुछ नहीं दिया गया है।" उसने कहा।

मेय दुःख के कारण चिन्तित हो उठी। उसने सोचा कि उसके लड़के को कभी भी न्याय न मिल सकेगा।

"परन्तु इस घर में चालीस मन चान्दी, चार मन सोना गड़ा हुआ है। यह तुम्हारे पिता ने मुझे अभी अभी बताया था। वह शान शू के हिस्से में जायेगा।" न्यायाधिकारी ने कहा। इस बात पर शान ची को विश्वास न हुआ। "कितने भी मन हो, वह शान शू की ही होगी। मुझे इस पर भी कोई आपत्ति नहीं है।" उसने कहा।

"अगर आपत्ति उठाई भी तो क्या, मैं उठाने दूँगा?" कहकर न्यायाधिकारी ने पूर्वी दीवार के नीचे खुदवाया। पाँचों मर्तबानों में चान्दी निकली। इसी तरह पश्चिम की दीवार के नीचे जब खोदा गया तो और पाँच मर्तबानों में चान्दी निकली। और छटे मर्तबान में सोना निकला।

न्यायाधिकारी ने उस सोने, चान्दी को शान-शू को दिलवा दिया। शान-ची को इसका खेद रहा कि यदि वह अपने सौतेली भाई के साथ पिता की सम्पत्ति ठीक-ठीक बाँटता तो उस सोना चान्दी में भी उसका आधा हिस्सा मिलता।

[१५]

महाराजा शुद्धोधन की मृत्यु हो गई थी। उनकी अन्त्येष्टि क्रिया हो रही थी। बुद्ध कपिलवस्तु के समीप निग्रोधाराम विहार में आये। प्रजापति ने बुद्ध के पास जाकर कहा—"बेटा, शुद्धोधन महाराजा ने शरीर छोड़ दिया है। राहुल और नन्द भी तेरे शिष्य हो गये हैं। मैं अब अकेली जीवित नहीं रह सकती। मुझे और मेरे साथ की ५०० स्त्रियों को अपने वर्ग में शामिल करके सन्यास दो।"

यदि स्त्रियों को शामिल कर लिया गया तो मेरे अनुयायियों और आन्दोलन की बदनामी कहीं न हो यह सन्देह करके बुद्ध ने कहा—"स्त्रियों के कारण मेरा आन्दोलन अपवित्र हो जायेगा।" प्रजापति ने बहुत कहा पर बुद्ध ने अपना निश्चय न बदला।

वे निग्रोधाराम से विशाल नगर के समीपवाले कूरागार शाला के पास गये। प्रजापति अपने साथ की स्त्रियों को लेकर वहाँ गईं। इस बार राजकुमारियाँ अपने केश कटवाकर सन्यासिनियों के वस्त्र धारण कर मिट्टी से बने भिक्षा-पात्र लेकर पैदल विशाल नगर गईं। ये राजकुमारियाँ तो इतनी कोमल थीं कि ऊपरली मंजिल से निचली मंजिल तक आते-आते वे थक

जाती थीं, जब वे इतनी दूर पैदल गईं तो उनके पैरों में छाले पड़ गये। लोग जत्थे बनाकर उनको देखने आये। कई अपने घरों से उनके लिए भोजन भी ले गये। कई औरने पालकियों में सवार होने का उनसे अनुरोध किया। पर स्त्रियों ने यह सब लेने से इनकार कर दिया। और वे इक्यावन योजन पैदल चलकर विशाल नगर पहुँचीं।

जब वे बुद्ध के विहार के पास पहुँचीं, तो शाम हो चुकी थी। वे विहार के अन्दर न गईं। बाहर ही रहीं। आनन्द कहीं से आ रहा था कि उसने उनको देखा। उनके पैरों से खून बह रहा था। धूल धूसरित थीं वे। बिल्कुल थकी माँदी। आनन्द को उन्हें देखकर दया आई। उसके आँखों से आँसू झरने लगे। "आप सब इस तरह क्यों आई हैं? शाक्यों को शत्रुओं ने अपने नगर से भगा दिया है? बुद्ध की माँ का इस जगह पर कैसे आना हुआ?" आनन्द ने पूछा।

प्रजापति ने आनन्द को सब बातें बताईं। आनन्द ने उनको वहीं रहने के लिए कह बुद्ध के पास जाकर उसने उनकी इच्छा बताई।

"आनन्द, हमारे आश्रम में स्त्रियों को प्रवेश देने का प्रयत्न कर रहे हो।" बुद्ध ने पूछा।

"क्या हमारे वर्ग में आने के लिए राजमाता भी योग्य नहीं है?" आनन्द ने पूछा। बुद्ध ने वही निश्चय दुहराया, जो उसने पहिले भी प्रकट किया था।

"यदि स्त्री को शिष्यवृन्द में ले लिया गया तो क्या उससे उसकी मुक्ति न होगी।" आनन्द ने फिर पूछा।

इस पर बुद्ध ने कहा—"बुद्ध केवल पुरुषों का उद्धार करने के लिए ही नहीं

पैदा होते हैं, स्त्रियों का उद्धार करने के लिए भी जन्म लेते हैं। मेरे उपदेश सुनकर विशाख आदि उपासिकायें नहीं बनी हैं!"

"यदि यही बात है तो हम स्त्रियों को भी स्वीकार कर सकते हैं! आप से पहिले के चौबीस बुद्धों ने स्त्रियों को भी शामिल किया था, यह आप स्वयं एक समय बता चुके हैं।" आनन्द ने कहा। बुद्ध ने यह सुनकर कुछ न कहा। अनुमति भी न दी।

"यह स्पष्ट है कि स्त्रियों को भी शिष्य वर्ग में प्रविष्ट किया जा सकता है। उस दशा में प्रजापति को, जिसने बुद्ध की इतनी सेवा की है, स्वीकार करने में क्या आपत्ति है!" आनन्द ने पूछा।

बुद्ध ने सोचकर कहा—"अगर अष्ट मार्ग का पालन करने के लिए तैयार हों तो प्रजापति हमारे साथ रह सकती हैं।" बुद्ध ने कहा।

आनन्द ने स्त्रियों के पास जाकर बुद्ध द्वारा घोषित आठ नियमों का पालन करने के लिए कहा, वे मान गईं। सब के समक्ष वे आश्रम में स्वीकृत कर ली गईं। प्रजापति को स्त्रियों की मुखिया निश्चित हुईं। इसके

कुछ दिनों बाद वे भावना समाधि द्वारा अर्हता भी हो गईं।

फिर असंख्य स्त्रियों ने आकर बुद्ध से सन्यास ग्रहण किया।

प्रजापति को निर्वाण पाने की इच्छा हुई। उसे पता लगा कि तब तक जिन्होंने बौद्ध धर्म को स्वीकार कर लिया था, उनमें निर्वाण पानेवाला कोई भी न था।

उसने बुद्ध से कहा—"बेटा, मैं तुम्हारे शिष्यों में सब से पहिले निर्वाण पाना चाहती हूँ। मुझे अनुमति दो। यदि मैंने कोई गल्ती की हो तो क्षमा करो।"

"चिन्तामणि को चमकाना जितना अनावश्यक है उतना ही तुमको क्षमा करना अनावश्यक है। यही नहीं जो निर्वाण के अधिकारी होते हैं, उनको एक दूसरे को क्षमा करने की आवश्यकता नहीं है। मेरे अनुयायियों में तुम्हें ही निर्वाण पाने का सौभाग्य मिलेगा।" बुद्ध ने कहा।

अन्यकौन्डिन्य, राहुल आदि के समक्ष प्रजापति ने अपना शरीर छोड़ दिया। उसकी अन्त्येष्टि में बुद्ध के सब शिष्य निमन्त्रित किये गये। कहा जाता है कि दहन संस्कार के समय देवता उनके
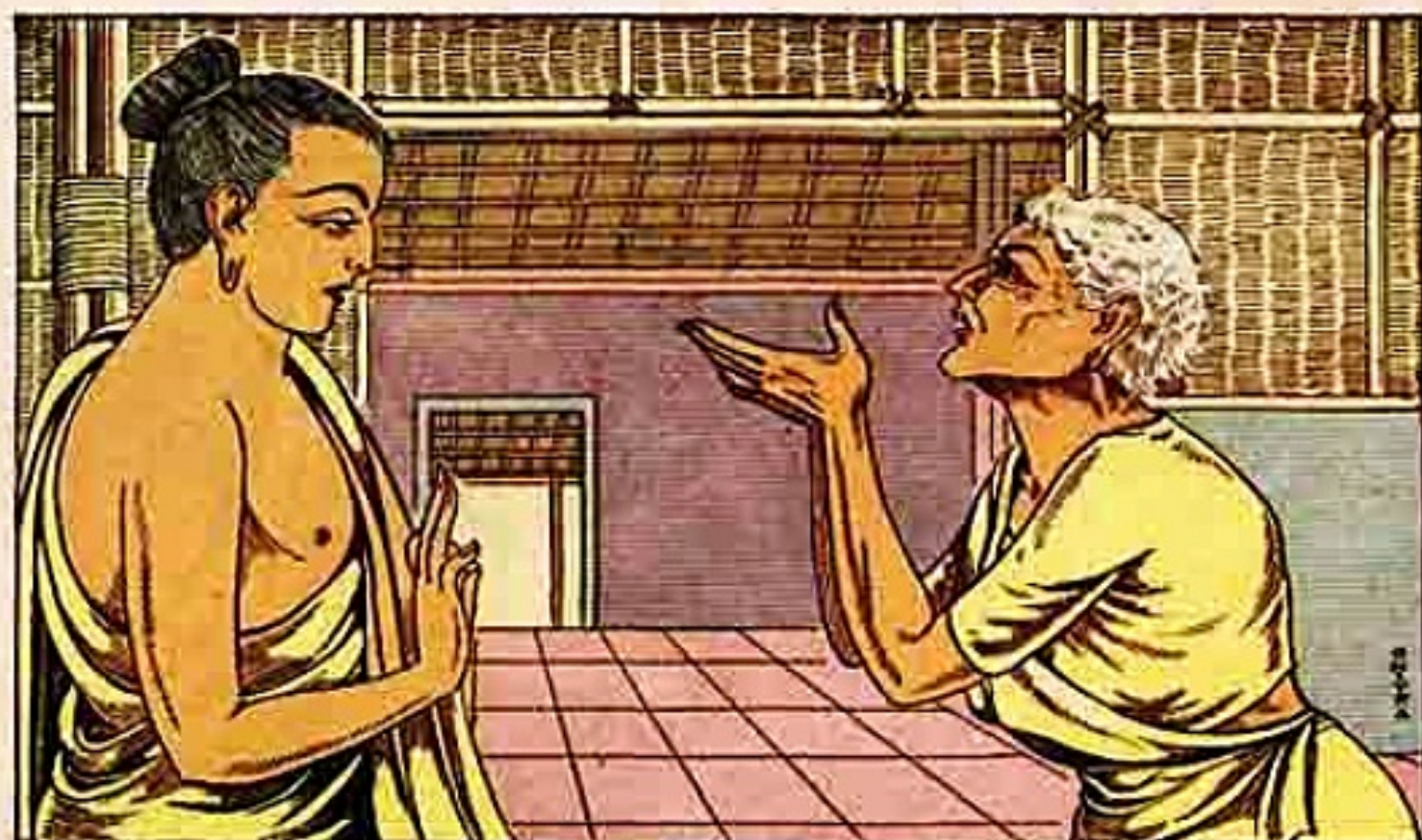
लिए विमान में आये। यह गौरव सिवाय बुद्ध के, उनके अनुयायियों में किसी और को न मिला।

प्रजापति के साथ उनके साथ आई हुई पाँच सौ राजकुमारियों ने प्राण छोड़ दिये। सब का एक साथ चन्दन की चिता पर दहन संस्कार किया गया। जहाँ प्रजापति का संस्कार किया गया था, कहा जाता है, वहाँ आनन्द को मोतियों का ढेर दिखाई दिया। उनको उठाकर उसने बुद्ध के भिक्षापात्र में डाल दिया।

*　　*　　*

यशोधरा, जो बुद्ध की कई जन्मों में पत्नी थी, उसी दिन पैदा हुई थी, जिस दिन बुद्ध पैदा हुये थे। बुद्ध के सन्यास लेने के बाद उसने भी कई बार सन्यास लेने का प्रयत्न किया, पर राजा शुद्धोधन ने उसे लेने न दिया। उसके ऊपर उसने पहरा तक लगवाया। वह हमेशा कहता रहा—"तुम्हारा पति वापिस आयेगा।" यशोधरा बहुत सुन्दर थी। जब यह पता लगा कि उसका पति उसको छोड़कर चला गया था शुद्धोधन को भय हुआ कि कई राजकुमार उसको उठाकर भी ले जा सकते थे।

यद्यपि उसने घर न छोड़ा था तो भी वह घर में एक प्रकार के सन्यास का पालन ही कर रही थी। वह मिट्टी के पात्र में खाती। बुद्ध जब कपिलवस्तु आये तो उसने उनकी अनुमति माँगी कि उसको सन्यासिनी होने दिया जाय। परन्तु बुद्ध ने अनुमति देने से इनकार कर दिया।

और जब राहुल बौद्ध भिक्खु हो गया, तो उसको बहुत दुख हुआ। तब भी राजा शुद्धोधन ने उसको आश्वासन दिया। महाराजा शुद्धोधन के मरने के बाद उसने बुद्ध के साथ जाने का निश्चय किया। परन्तु प्रजापति ने बताया कि बुद्ध सन्यासिनियों को साथ नहीं रहने दे रहे थे।

कालक्रम से यशोधरा को बहुत-से लोगों की सम्पत्ति मिली। उनमें शुद्धोधन, महामाया, महाप्रजापति, सिद्धार्थ, नन्द, राहुल, देवदत्त, सुप्रबुद्ध थे। पर इस प्रकार प्राप्त की हुई सम्पत्ति से वह सन्तुष्ट न थी। वह हजार क्षत्रिय स्त्रियों को लेकर महा प्रजापति के पास चली गई। कपिलवस्तु और कोली नगरवासियों ने उसको जाने से रोका। वह न रुकी। उसने उनके रथ भी न लिये। वह पैदल ही गई।

तब तक प्रजापति के नेतृत्व में सन्यासिनियों का अपना अलग वर्ग बन गया था। यशोधरा भी उसी वर्ग में प्रविष्ट हो गई।

यशोधरा की आयु अठत्तर वर्ष की थी। एक दिन शाम को उसमें निर्वाण पाने की इच्छा पैदा हुई। उसने बुद्ध से निर्वाण प्राप्ति की अनुमति माँगी। बुद्ध ने अनुमति दे दी। उस दिन रात को उसने अपने कुटीर में निर्वाण प्राप्त कर लिया।

और दो साल गुज़र गये। बुद्ध की आयु अस्सी वर्ष की हुई। वे अपने शिष्यों

को साथ लेकर पावा नगर गये। वहाँ वे चन्द नाम के लुहार के आम के बाग में ठहरे। यह देख चन्द को बहुत प्रसन्नता हुई। उसने उन सब को अपने घर बुलाया। दावत दी। और दावत में उसने सूअर का माँस परोसा।

बुद्ध जब बुद्धत्व प्राप्त कर रहे थे, तो सुजाता ने उसको भोजन दिया था। पैन्तालीस वर्ष के बाद चन्द ने उसको अन्तिम भोजन दिया।

इस भोजन के कारण बुद्ध को रोग हुआ। उन्हें अतिसार हुआ। प्यास भी लगती। वे पावा से कुशी नगर के लिए निकले। उस बारह मील के फासले में उन्होंने पच्चीस बार विश्राम किया।
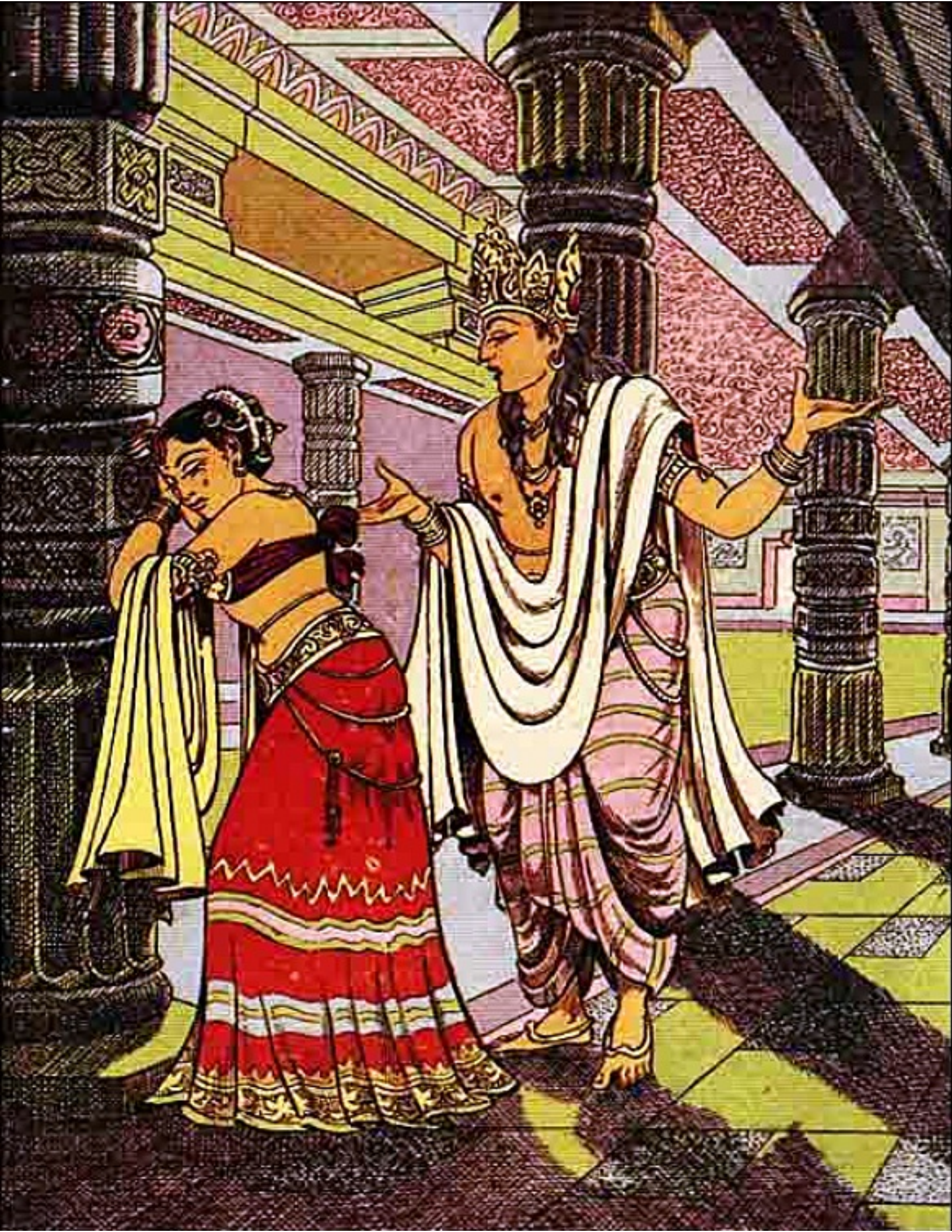
उनको ज्ञात हो गया कि उनका निर्वाण समीप आ गया था। उन्होंने अपने अनुचरों से यह कहा भी। बुद्ध को हिरण्यवती नगर से परे उपवर्तन नामक शाल वन में ले जाया गया। दो शाल वृक्षों के बीच वे उत्तर दिशा की ओर सिर रखकर लेट गये।

अब आनन्द ने समाचार भेजा कि बुद्ध निर्वाण प्राप्त करने जा रहे थे तो मालव देश के राजा अपनी पत्नियों के साथ उनके दर्शनार्थ आये। बुद्ध ने अन्तिम क्षण में अपने शिष्यों से कहा—"यदि तुमको मेरे धर्मोपदेशों के बारे में कोई सन्देह हो, तो अभी पूछ लो।" परन्तु किसी को कोई सन्देह न था। किसी ने कुछ न पूछा। फिर बुद्ध ने आँखें बन्द कर लीं। बुद्ध का अवतार इस प्रकार समाप्त हुआ। परन्तु उनका उपदिष्ट धर्म संसार में सर्वत्र देश देशान्तर में प्रचलित हुआ और भिन्न भिन्न देशवासियों का धर्म के मार्ग पर चलने के लिए वह पथप्रदर्शक हो सका। (समाप्त)

मार्कोपोलो

आज सभी देश एक संसार के मालूम होते हैं। रेल, वायुयान, रेडियो, टेलिग्राफ के कारण सब देशोंमें सामीप्य बढ़ गया है। परन्तु कुछ सदियों पहिले, एक एक देश अपने आप में संसार लगता था। पश्चिम देशवासी पूर्व के देशों के बारे में न जानते थे। अगर चीन और भारत के बारे में मालूम भी होता, तो वे सब लोक कथायें-सी होतीं। उस स्थिति में कुछ साहसी व्यक्तियों ने संसार की परिक्रमा की और दूर देशों के विषय में वास्तविक सामग्री इकट्ठी की।

इस प्रकार संसार की परिक्रमा करनेवाला जगत प्रसिद्ध मार्कोपोलो भी था। वह वेनिस का रहनेवाला था। उसका जन्म १२५५ में हुआ। वह पन्द्रहवें वर्ष की उम्र में ही पिता और चाचा के साथ बहुत दूर तक पैदल गया। पहाड़ों को पार करते, रेगिस्तानों में से होते हुए वे चीन देश पहुँचे।

उस समय चीन का राजा मँगोलियन सम्राट कुब्लाय खान (१२१६-१२९४) था। उसने इन तीनों को आतिथ्य दिया। मार्को उसके दरबार में ही पला। बड़े होने पर कुब्लाय खान के दूत के रूप में वह कोचिन-चीन व भारत आया। उसने बहुत-सी भाषायें सीखलीं। वह जिस काम पर भेजा जाता था, वह तो करता ही, इसके अलावा उन उन देशों के रीति-रिवाज, रहन-सहन, वहाँ की भौगोलिक स्थिति के बारे में भी अपने राजा को जानकारी देता। वेनिस छोड़ने के तेईस साल बाद, पोलो ने फिर घर आना चाहा। कुब्लाय खान बिल्कुल न चाहता था कि वह जाय। आखिर उसको, उसे जाने की अनुमति देनी पड़ी। वेनिस आ जाने के बाद, मार्को ने जो देखा था, अनुभव किया था, वह सब एक पुस्तक में लिखा। इस ग्रन्थ की कई बातों पर लोगों को विश्वास न हुआ। परन्तु उस पुस्तक से संसार के अन्वेषकों को बाद में प्रेरणा मिली। उसकी पुस्तक को पढ़कर संसार को देखने के लिए निकलनेवालों में कोलम्बस भी एक था। वह समुद्र यात्रा द्वारा भारत के लिए निकला, पर पहुँचा अमेरिका में। इस तरह अमेरिका का पता लगाया। होते होते संसार के अन्वेषक के रूप में मार्कोपोलो को बहुत ख्याति मिली। उसकी यात्राओं के वर्णन अगले मास से "चन्दामामा" में प्रकाशित होंगे। उनमें उस समय की परिस्थिति के बारे में बहुत-सी सामग्री मिल सकेगी।

४. साहसिक कार्य

शारा और उसके पति ने शान्टली के पास एक बड़ी जमीन्दारी खरीदी। वह बहुत शान्त जगह थी। वहाँ बड़े बड़े घर थे। पशुओं के प्रशिक्षण के लिए यह आदर्श स्थल था। वहाँ की स्वच्छ हवा, प्रकाश जंगली जानवरों के लिए आरोग्यदायक थे, फिर भी उनको कभी कभी बीमारी हो ही जाती।

शान्ड्रा नाम की शेरनी के गले में प्रायः फोड़े निकला करते। एक बार उसको इतना दर्द हुआ कि वह सिकुड़कर एक कोने में लेट गई। खाना भी न खाया। यह भी सन्देह हुआ कि वह जिन्दी रहेगी कि नहीं। शारा को अपने जन्तुओं पर बहुत प्रेम था। इसलिए उसे शोक हुआ।

मैं ठीक उस समय उनके यहाँ अतिथि था। शान्ड्रा को जब मैंने देखा, परखा तो उसके जबड़े के नीचे सूजन थी। ताकि उसकी और अच्छी तरह परीक्षा की जा सके....शारा ने उसको उस पिंजड़े में भेजा, जहाँ उसको शिक्षा दी जाती थी। शान्ड्रा पेट के बल पर जमीन पर पड़ी रही। उसे मनाया, डराया पर वह न हिली। सरदी थी, कहीं उसकी बीमारी और न बढ़ जाये, यह सोच रोज़ की तरह शारा उसके पिंजड़े में नियमपूर्वक गई।

शान्ड्रा को बहुत तकलीफ़ हो रही थी। अपने मालकिन को देखते ही शायद उसको याद आया कि इससे पहिले भी उसका इसी बीमारी का इलाज किया गया था।

या तो वह सोचकर कि शारा उसके फोड़ों को छुयेगी या दर्द के कारण वह पगला गई हो, बिना आगे पीछे देखे अपना सारा अलस छोड़ वह यकायक शारा पर लपकी। कूदी।

क्योंकि वह अनुभवी थी, इसलिए वह घबरायी नहीं। फोर्क और हन्टर से उसका जैसे तैसे मुकाबला किया। परन्तु शान्ड्रा ने उसकी बिल्कुल परवाह न की। वह तो बिगड़ी हुई थी। उसका पीछे हटना तो अलग वह गरजती, लार टपकाती शारा पर और भयंकर रूप से कूदी। उसने अपने पंजे दिखाये, मार की भी परवाह न की। शारा खतरे में मालूम होती थी। वह एक एक पैर पीछे रखती पिंजड़े के सीखचों के पास आ गई। अब और पीछे नहीं आया जा सकता था।

शान्ड्रा की अगर यह हालत रही, तो क्या परिणाम होगा यह आसानी से अन्दाज़ किया जा सकता था। इस बीच मैं भी उस पिंजड़े में गया। शान्ड्रा के पास मैं पीछे से पहुँचा। शेर का पंजा शारा के पेट और जाँघ पर पड़नेवाला था। उस समय शान्ड्रा का ध्यान हटाने के लिए मैंने उसकी पीठ पर ज़ोर से मारा।

मेरा प्रयत्न सफल रहा। शान्ड्रा पीछे मुड़कर मुझ पर कूदी। उसके नाखून मेरे बायें हाथ में जा घुसे। जब मैं पीछे हटा तो देखा कि हाथ से खून बह रहा था। पहिले तो मुझे लगा जैसे हाथ उसने खा लिया हो। इसके वर्णन के लिए इतना समय लगा, पर यह सब हो गया कुछ ही क्षणों में। मेरे हाथ में एक हन्टर मात्र था। एक और हथियार लेने का भी समय न था। मैने आत्मरक्षा के उत्साह में दायें हाथ से शेर के नाक पर खूब ज़ोर से घूँसे मारे। उन घूँसों के कारण उसका

गुस्सा कुछ ठंडा पड़ा। ज़ोर ज़ोर से हाँफती हुई वह कुछ दूर हट गई।

शारा ने जल्दी आकर मेरे पीछे पिंजड़े का दरवाजा खोला। हम दोनों तुरत बाहर गये और दरवाजा फिर से बन्द कर दिया। ऐसी कोई बड़ी हार न थी। पर बाद में देखा गया कि जो घाव मुझे लगा था वह उतना जबर्दस्त न था। मुझे खुशी रही कि कम से कम जीता तो रहा। हम दोनों के लिए यह एक अच्छा अनुभव था। पर इसके कारण एक बात यह हुई कि शान्ड्रा का फोड़ा फूट गया। उसने प्रहार किया था, पर इसलिए मैं उससे नाराज़ न हुआ। जब उसे दर्द न होता था, तब वह अच्छी थी। यही नहीं, वह शेरनी थी।

*　　*　　*

जन्तुओं को शिक्षा देने में जहाँ तक मैं जानता हूँ, रोलेन्ड फ्रान से बढ़कर साहसी शायद कोई न था। सरकस संसार में वह रोलेन्ड नाम से मशहूर था। चार बरस की उम्र में ही उसने काम में प्रवेश किया। नौवें वर्ष में वह भागते घोड़ों पर फीट करने लगा। चौदह वर्ष की उम्र में वे शेरों के साथ काम करने लगा। किसी ने ही इतनी कम उम्र में इतना सब कुछ किया है।

रोलेन्ड के द्वारा मेरा टार्गा से परिचय हुआ। सुन्दर जन्तुओं में टार्गा एक थी। पहिले पहल टार्गा के साथ तीन और शेरनियाँ काम किया करती थीं। सरदियों में पिंजड़ों को साफ़ करनेवाला पिंजड़े तो साफ़ कर गया, पर वहाँ सूखी घास डालना भूल गया। खेल के बाद क्योंकि वे गीली घास पर सोये थे, इसलिए सवेरे उनमें से तीन मर गईं। एक टार्गा ही बची। उसको भी ठीक होने के लिए

पूरा सप्ताह लगा। सप्ताह भर रोलान्ड उसके साथ ही रहा। जो कुछ इन्जेक्शन देने थे उसीने दिये। आखिर टार्गा ने आँखें खोलीं, अपने प्राण रक्षक की ओर देखा। फिर उसमें पहिले का जोश आ गया।

उसको फिर से स्वस्थ होने के लिए बहुत-सा समय लगा। उस समय में वह हमेशा चिढ़ती-सी रही। रोलेन्ड की शुश्रुषा के कारण, वह पुनः ठीक हो गई। उसका स्वभाव भी यथापूर्व हो गया। उसके जितना मीठे स्वभाववाला पशु मैंने कभी नहीं देखा।

काम में भी उसके जैसा जन्तु मैंने न देखा। अगर कभी रोलेन्ड के हाथ से हन्टर गिर पड़ता तो वह अपने पंजे से उठाकर देती। बिना उसके माँगे ही। यह उसे किसीने न सिखाया था। अगर कभी प्रदर्शन में कोई शेर पंजा उठाता तो उसे लगता, जैसे वे उसके मालिक पर हमला करने जा रहे हों। वह उन पर लपकती और उनको एक ओर हटा देती। यह भी उसे किसी ने न सिखाया था।

एक बार अल्जीयर्स में रोलेन्ड ने अपना प्रदर्शन समाप्त करके शेरों को पिंजड़ों में भेज दिया था। सब के बाद टार्गा जाया करती। वह जोश में फुदकती-फुदकती मालिक की ओर आई। वह कुत्ते की तरह मालिक के शरीर से अपने शरीर को रगड़ने की अपेक्षा उसके पैरों के बीच में आ गई। रोलेन्ड एक कदम कूदा और नीचे गिर गया। कुछ भी हो शेरनी की मजाक जरा भद्दी ही थी। एक बार जब "पिरामिड" से वह उतर रही थी। तो जल्दी में उसने स्टूल को इस तरह

लात मारी कि वह रोलेन्ड के सिर पर जा लगी।

अगले सप्ताह रोलेन्ड ने उसको कन्धे पर उठाया। यह रोज का काम था। जाने कैसे उसके पेट में कहीं दर्द हुआ और वह स्प्रिन्ग की तरह सिकुड़ गया। उसके सिकुड़ने से ऐसा हुआ कि उसके टाँग की हड्डी रोलेन्ड के गाल पर लगी, और वह गिरता गिरता बचा।

एक बार सरकस जब एक जगह से दूसरी जगह जा रहा था तो सुना गया कि "शेर बचकर निकल गये हैं।" उस समय उस ईलाके में चरने के लिए पशुओं का एक झुण्ड आया हुआ था। जब शेरों को वह दिखाई दिया, उनको जब उनकी गन्ध आई, तो वे भाग निकले।

रोलेन्ड गाड़ियों से उतरा और अपने पिता आदि की सहायता से जैसे भी हो, चार शेरों को पिंजड़ों में भेज सका। परन्तु टार्गा को वह बश में न कर सका। रोलेन्ड ने उसके गले में फन्दा डालना चाहा। पर वह बचकर एक त्योरी पर जा चढ़ी। उसे मनाया, ड़राया, हन्टर दिखाया, पर वह नहीं उतरी।

आखिर रोलेन्ड एक बड़ा डब्बा लाया। उसका ढकन खोला, कभी कभी टार्गा उसमें सफ़र किया करती थी। जैसा कि वह चाहता था, वह उसमें कूदी। जल्दबाजी में रोलेन्ड यह न देख सका कि डब्बे में पहिले ही एक भालू था। टार्गा अन्दर आ रही थी कि भालू ने उसके मुख पर मारा। टार्गा उससे भिड़ गई। परन्तु उस तंग जगह में भालू का ही बड़ा हाथ रहा, और कुछ किया न जा सकता था। डब्बा खोला गया। परन्तु टार्गा को काफ़ी चोट लगी थी। भालू से वह हरा दी गई थी।

गंगावतरण

(दूसरा अध्यय)

सिंहासन पर सगर नृपति थे
चिंतामूर्ति बने साकार,
बोल नहीं पाते थे कुछ भी
अन्तर में था हाहाकार।

मन्त्री मूक, पुरोहित निश्चल
व्याकुल था पूरा दरबार,
मास कई हो गये किंतु थे
आये लौट न राजकुमार।

इसी समय में राजसभा में
दूत एक सहसा आया,
'जय राजा की' कहकर उसने
अपना शीश नवाया।

फिर बोला यह—"उत्तर-दक्षिण
पूरब-पश्चिम के सब देश,
डाले मैंने देख कि पाऊँ
पता कुमारों का मैं लेश।

किंतु कहीं भी पता न पाकर
बैठा जब मैं सागर-तीर
सोच रहा था जानें क्या क्या
होकर अति बेचैन अधीर;

उसी समय कुछ मछुओं ने आ
कही भयानी मुझको बात—
समा गये सब कुँवर भँवर में
खा-खा लहरों का आघात!"

यह सुन शोकाकुल राजा के
नयनों में सावन घिर आया,
अपने पोते अंशुमंत को
निकट उन्होंने बुलवाया।

अंशुमंत ही बचा एक था
उनके कुल का आशा-द्वीप,
लगा उसे ही निज छाती से
सिसक उठे अति विकल महीप।

'भारतीभक्त'
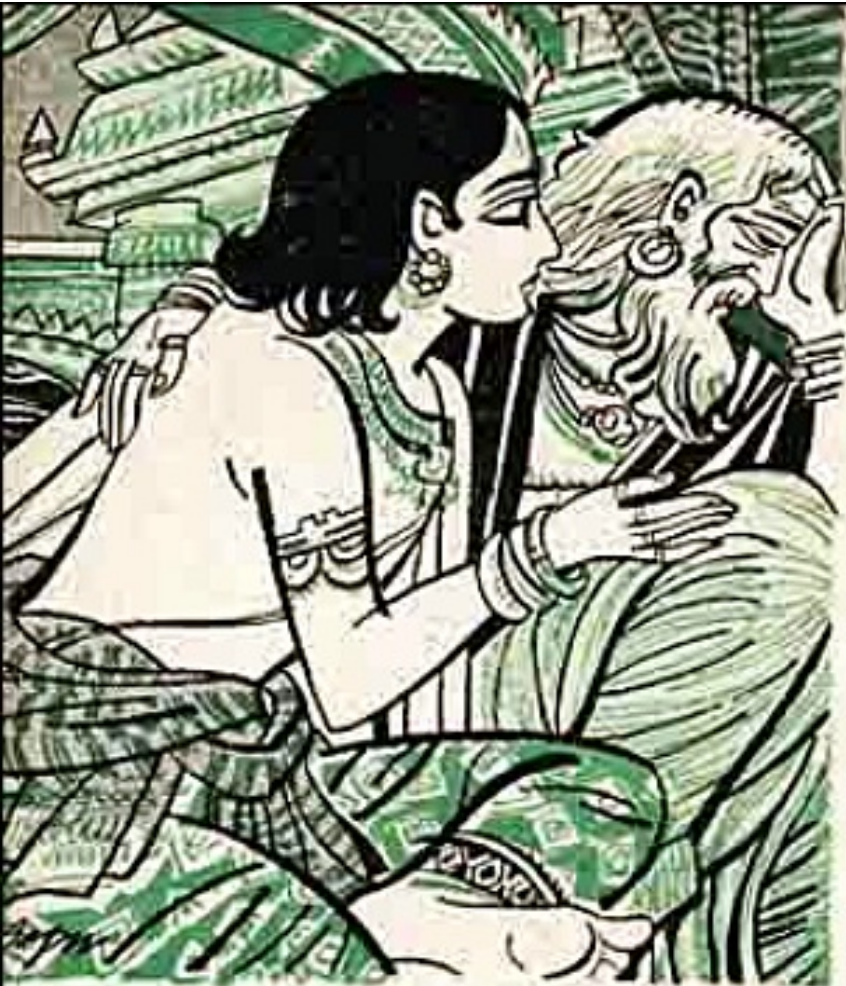
राजा को यों देख सिसकते
अंशुमंत भी हुआ अधीर,
'दादा' 'दादा' कहता वह भी
लगा बहाने दृग से नीर।

राजा उसको लगा हृदय से
बोले कर आँसू-बौछार—
"बेटा मैं ही अपराधी हूँ
मेरे जीवन को धिक्कार,

पिता और चाचा सब तेरे
अब न कभी भी लौटेंगे,
हूँ मैं ही उनका हत्यारा
लोग मुझे ही कोसेंगे।

अश्वमेध का घोड़ा लाने
उन्हें न जबरन भेजता,
तो न काल समय से पहले
उन्हें अचानक घेरता।

अश्वमेध तो हुआ भंग ही
पुत्रों का भी पता नहीं,
कुलदीपक अब तुम ही मेरे
और सहारा रहा नहीं।"

दादा का दुख देख तुरत ही
अंशुमंत हो गया खड़ा,
आँसू डाले पोंछ नयन के
और हृदय को किया कड़ा।

दादा, आप नहीं चिंतित हों
उन्हें खोजने मैं जाऊँगा,
पिता और चाचाओं को मैं
यहाँ साथ ही लाऊँगा।

दें मुझको आशीष कि जिससे
पूरा कर पाऊँ यह काम"—
यों कह करके अंशुमंत ने
राजा को झुक किया प्रणाम।

देख जोश पोते का राजा
मन में अति हरषाये,
आशीर्वादों के आँसू जल
खूब उन्होंने बरसाये।

अंशुमत ले विदा नगर से
हुआ बहुत जल्दी तैयार,
अस्त्र-शस्त्र से सज्जित होकर
घोड़े पर झट हुआ सवार।

लगा हवा से बातें करने
उसका घोड़ा वह तत्काल,
छूटे तीर धनुष से जैसे
थी उसकी वैसी ही चाल।

उसके टापों के कारण जो
पथ में छाया गर्द-गुबार,
उसमें छिप गये तुरत ही
घोड़े के ही साथ सवार।

चलते चलते बंग देश की
सीमा तक जा पहुँचा वीर,
जहाँ धरा से सागर की थी
लहरें मिलतीं सदा अधीर।

कूद पड़ा झट वह सागर में
लहरें उसको सकीं न जीत,
पहुँचा आखिर महाभँवर में
लेकिन फिर भी हुआ न भीत।

बीच भँवर में जाकर उसको
मिली बड़ी भारी चट्टान,
निकट उसीके गुहा-द्वार था
मृत्युगर्त के द्वार समान।

लेकिन उससे अंशुमंत तो
हुआ नहीं तिल भी भयभीत,
बाधाओं पर साहस की ही
सदा यहाँ होती है जीत।

ठोकर खाता अंधगुहा में
बढ़ता ही वह गया कुमार,
सहसा उसको लगा कि जैसे
कोई उसको रहा पुकार।

चौंक पड़ा वह उसको सुनकर
अंधकार भी रहा नहीं,
दिखी राख ही राख वहाँ पर
हेरा उसने जहाँ कहीं।

फिर सहसा उसने घोड़े को
बँधा पास में ही पाया,
और खड़े थे एक वहाँ मुनि
अंशुमंत जिनसे चकराया।

मुनि ने कहा—"कपिल मेरा है
नाम, सुनो हे राजकुमार!
सुनी यहाँ पर तुमने विस्मित
मेरी ही तो अभी पुकार!

अश्वमेध का घोड़ा यह है
साथ इसे तुम ले जाओ,
दूँगा मैं आशीष तुम्हें अब
पास जरा मेरे तुम आओ।

होगा पूरा यज्ञ सगर का
देता हूँ मैं यह वरदान,
सूर्यवंश के राजाओं का
यश तेज नित सूर्य समान।"

अंशुमंत ने आनन्दित हो
मुनि को शीश नवाया,
उत्साहित हो उठे बहुत मन
यद्यपि थकी हुई थी काया।

बोला वह—"हे मुनिवर, मैं तो
देख आपको धन्य हुआ,
मिटे पाप के ताप सभी औ'
पुण्यों का है उदय हुआ।

कृपा आपने की है मुझपर
दुख भी मेरा दूर करें,
हाल पिता औ' चाचाओं का
सुना दया भरपूर करें।

इस पर मुनि ने कहा—"उन्हें तो
दुष्कृत्यों का दण्ड मिला है,
अहंकार था उन्हें बहुत ही
उसका ही तो कुफल मिला है।

उनकी चिंता छोड़ो अब तुम
जाओ अपने घर को जाओ,
अश्वमेध को पूरा करने
घोड़ा भी यह लेते जाओ!"

हमारे देश के आश्चर्य :

४. महाबलिपुरं

महाबलिपुरं मद्रास से ३५ मील की दूरी पर, पूर्वी समुद्र के तट पर है। सातवीं शताब्दी में पल्लव राजाओं ने यहाँ एक नगरी बसाई थी। इस नगरी को मामल्लपुरं भी कहा जाता है।

गत १३ शताब्दियों में नगरी तो खण्डहर हो गई, परन्तु अब भी कुछ आश्चर्यजनक पल्लव मूर्तियाँ सुरक्षित हैं।

दक्षिण में शिल्प को प्रोत्साहित करनेवाले सर्व प्रथम पल्लव ही थे। इनकी बनवाई हुई मूर्तियाँ कांचीपुरं में और महाबलिपुरं में हैं। इनको देखने के लिए यहाँ विदेशी आते हैं।

महाबलिपुरं की मूर्तियाँ बड़े-बड़े पत्थरों को काटकर बनाई गई हैं और पहाड़ों में खोदी गई हैं। ये कई तरह की हैं।

इनमें से मुख्य पाँच रथ हैं। ये पाण्डवों के रथ के नाम से प्रसिद्ध हैं।

महिषासुर मण्डप एक गुहा में निर्मित मन्दिर है। इनमें आश्चर्यजनक रूप से शेषशायी विष्णु और महिषासुर मर्दिनी की मूर्तियाँ पत्थर में खोदी गई हैं।

कृष्ण मंडप में, कृष्ण के जीवन से सम्बन्धित मूर्तियाँ हैं।

अर्जुन की तपस्या भी उत्तम शिल्प का सुन्दर उदाहरण है।

कहा जाता है कि समुद्र के तट पर जो मन्दिर बना हुआ है, उसे राजसिंह ने बनवाया था। यह भी बताया जाता है कि यहाँ पहिले सात मन्दिर थे अब सिवाय एक के सब समुद्र में मग्न हैं। महाबलिपुरं प्राचीन दाक्षिणात्य शिल्प व कला का परिचायक है।

१. रमा देवी, दरया गंज, दिल्ली

भाई जी! क्या यह ज़रूरी है कि कहानी भेजते समय चित्र भी साथ भेजे जायें?

नहीं, बिल्कुल नहीं। चित्र बनाने के लिए शंकर व चित्रा जो हैं।

२. प्रफुल्ल, जीरो रोड़, इलहाबाद

अंग्रेजी में "चन्दामामा" नहीं निकल रहा है। क्या कारण है?

और कुछ नहीं, अंग्रेजी में "चन्दामामा" लोकप्रिय नहीं हो पाया। इसी कारण, १९५७ में हमें अंग्रेजी ही नहीं सिन्धी, मलयालम और ओरिया "चन्दामामा" का प्रकाशन भी बन्द करना पड़ा।

३. उदयकुमार, दादर, बम्बई

चन्द्रमा में आपका "चन्दामामा" बेचने की मैं अनुमति चाहता हूँ? क्या देंगे?

हाँ, हाँ, ज़रूर, यदि आप विदेशी मुद्रा विनियम की व्यवस्था कर लें।

४. राजेन्द्रकुमार, पीपलपेड़ी, देहरादून

"चन्दामामा" पर रूसियों ने उपग्रह भेजा है, क्या उन्होंने आपसे इज़ाज़त ली थी?

नहीं तो। क्योंकि वे चन्दामामा को आदर की दृष्टि से ही देख रहे हैं। इसलिए हमें असन्तुष्ट होने की आवश्यकता नहीं।

५. रामचन्द्र, विजयलक्ष्मी कोलोनी, आगरा

चन्दामामा पढ़ना चाहता हूं पर पास पैसे नहीं हैं। क्या करूं?

आपके परिचितों में कोई ऐसा नहीं जो खरीद सके!

६. सीता देवी, शनिवारपेट, पूना

क्या आप प्रसिद्ध "मञ्योष्का" का दाम बता सकेंगे?

मञ्योष्क हमारे देश में नहीं बेचा जाता। अगर कभी यहाँ बेचा जाने लगेगा तो उसका दाम बतायेंगे।

७. महेशचन्द्र, ज्वालापुर

नया धारावाहिक "अग्निद्वीप" कौन लिख रहे हैं?

वे ही लिख रहे हैं, जिन्होंने "भयंकर देश", "धूमकेतु", "काँसे का किला" आदि लिखे थे।

८. बालमुकुन्द पटौधा, कटरा बाजार, सागर, (म. प्र)

अहिंसा ज्योति की जगह कौन-सी कहानी प्रस्तुत होगी?

'अहिंसा ज्योति' की जगह दो कहानियाँ हम प्रकाशित कर रहे हैं। "मार्कोपोलो की साहसिक यात्रायें" और "गलीवर की यात्रायें", दूसरी धारावाहिक चित्र कथा होगी। और प्रति मास प्रकाशित होगी।

९. प्रतिमा चौहान, गुड़गाँव

अगर आप यह बतायें कि दास और वास को "टाइगर" कहाँ मिला था, तो मैं भी एक खरीद लूँ?

फिजूल रुपया क्यों खराब करते हैं? "टाइगर" तो आप ही सभी का है। जैसा हमारा वैसे आपका।

यह भी....

[आप भी इस तरह के प्रश्न, इस स्तम्भ के लिए नियमित रूप से भेज सकते है। हम उनमें से कुछ प्रश्न चुनकर उनका उत्तर देंगे। प्रश्नों को सोच समझ कर भेजना ही अच्छा है। स्पष्ट है कि हर प्रश्न का हमेशा उत्तर नहीं दिया जा सकता।]

गुलाम की सूझ-बूझ

एक राजा के पास कई गुलाम थे। उनमें से एक, एक दिन राजमहल छोड़कर जंगलों में भाग गया। राजा के सैनिकों ने सारा जंगल छान डाला और उसे ढूंढ-ढांढ कर राजा के सामने हाजिर किया। मन्त्री ने सलाह दी कि उसको मौत की सज़ा दी जाय। यह सुनकर गुलाम ने हाथ जोड़कर निवेदन किया—"महाराज, मैं आज़ादी चाहता था, इसलिए भाग गया। मैंने कभी किसी की कोई हानि नहीं की। अगर मुझ जैसे निरपराधी को आपने मरवाया, तो आप नरक जाकर रहेंगे।"

"अगर यही बात है, तो बताओ मैं नरक से बचने के लिए क्या करूँ!" राजा ने मुस्कराते हुए पूछा।

"मुझे मन्त्री को मारने के लिए अनुमति दीजिए। तब मैं हत्यारा हो जाऊँगा! उसके बाद यदि आप मुझे फांसी पर चढ़ा देंगे, तो आपको इसका पाप नहीं लगेगा।" गुलाम ने कहा।

राजा को गुलाम की सूझ-बूझ देखकर सन्तोष हुआ और उसने गुलाम को मुक्त कर दिया।
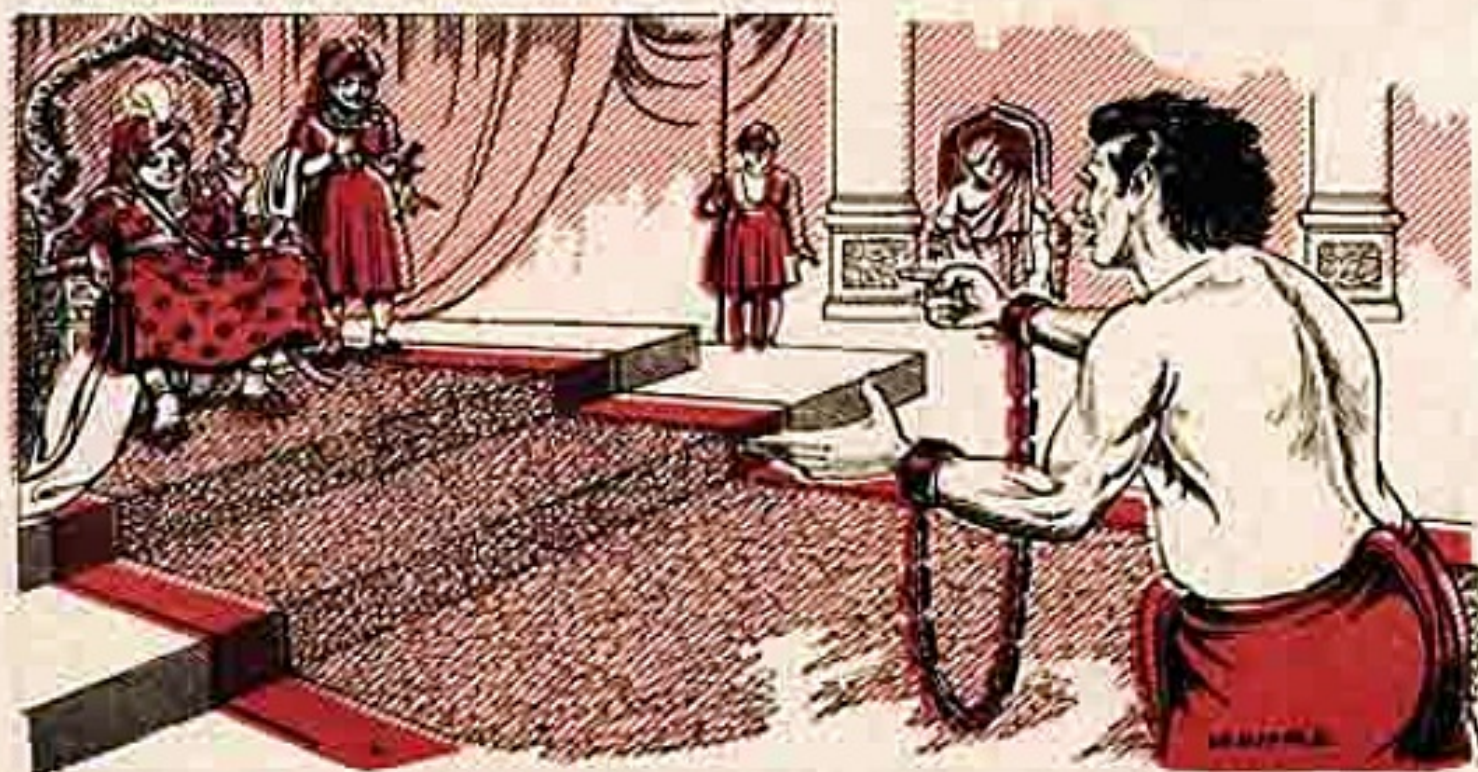
फ़ोटो - परिचयोक्ति - प्रतियोगिता

जून १९६० :: पारितोषिक १०)

कृपया परिचयोक्तियाँ कार्ड पर ही भेजें ।

ऊपर के फ़ोटो के लिए उपयुक्त परिचयोक्तियाँ चाहिये। परिचयोक्तियाँ दो-तीन शब्द की हों और परस्पर संबन्धित हों। परिचयोक्तियाँ पूरे नाम और पते के साथ कार्ड पर ही लिख कर निम्नलिखित पते पर ता. ७, अप्रैल '६० के अन्दर भेजनी चाहिये।

फ़ोटो - परिचयोक्ति - प्रतियोगिता
चन्दामामा प्रकाशन
वडपलनी :: मद्रास - २६

अप्रैल – प्रतियोगिता – फल

अप्रैल के फ़ोटो के लिए निम्नलिखित परिचयोक्तियाँ चुनी गई हैं। इनके प्रेषक को १० रु. का पुरस्कार मिलेगा।

पहिला फ़ोटो : **मृत्यु का खेल।**
दूसरा फ़ोटो : **पुस्तकों से मेल॥**

प्रेषक : भूपेन्द्रसिंह, १४, बुशहर हाऊस, राम बाज़ार, शिमला

चित्र-कथा

एक दिन दास और वास बाग में गेंद खेल रहे थे। यदि एक की फेंकी हुई गेंद दूसरा पकड़ न पाता तो "टाइगर" उसको पकड़कर लाकर देता। उस समय एक शरारती लड़का एक बड़े कुत्ते को लेकर वहाँ आया। उसने गेंद लेनी चाही। उसने अपने कुत्ते को उकसाया। उसने उस गेंद को पकड़ना चाहा, जो दास ने वास की ओर फेंकी थी। परन्तु गेंद उसके मुख पर लगी वह चीखता चम्पत हुआ। और शरारती लड़का भी उसके साथ रफू चक्कर हो गया।

Printed by B. NAGI REDDI at the B. N. K. Press Private Ltd., and Published by B. VENUGOPAL REDDI for Sarada Binding Works, 2 & 3, Arcot Road, Madras-26. Controlling Editor: 'CHAKRAPANI'

Photo by S. Parashram

पुरस्कृत
परिचयोक्ति

पुस्तकों से मेल !!

प्रेषक :
भूपेन्द्रसिंह - सिमला

CHANDAMAMA (Hindi) APRIL 1960 Regd. No. M. 5452

बुद्ध चरित्र